सदीनामा

सोच में इजाफे की पत्रिका www.sadinama.in ISSN : 2454-2121

वर्ष-18 ❑ अंक - 6 ❑ 1 से 30 अप्रैल, 2018 ❑ पृष्ठ- 28 ★ RNI No. WBHIN/2000/1974 ❑ मूल्य - 5.00

मुस्लिम समुदाय में सुधार : समग्र दृष्टिकोण अपनाने की जरूरत

रामपुनियानी

ram.puniyani@gmail.com

अंग्रेजी से हिन्दी रूपातरण अमरीश हरदेनिया

हर्ष मंदर के लेख (द इंडियन एक्सप्रेस, मार्च 7, 2018) ''सोनिया सेडली'' और रामचंद्र गुहा के उसके प्रति उत्तर में इसी समाचारपत्र में प्रकाशित आलेख ''लिबरल्स ओ'' ने भारत में मुस्लिम समुदाय की स्थिति और उसमें सुधार की प्रक्रिया पर नए सिरे से एक बहस शुरु कर दी है। यद्यपि इस प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कई कारक है तथापि उन्हें मोटे तौर पर दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है - एक, समुदाय के अन्दर और दूसरा समुदाय के बाहर और इन दोनों के सकरात्मक और नकारात्मक दोनों प्रभाव परिलक्षित हो रहे हैं। इन दोनों के जटिल संयुक्त प्रभाव से ही समय के साथ किसी भी समुदाय में परिवर्तन आते हैं। जहाँ मंदिर का फोकस मुस्लिम समुदाय पर पड़ने वाले बाहरी नकारात्मक प्रभावों पर हैं वहीं रामचंद्र गुहा, समुदाय के भीतर के कारकों पर ध्यान केन्द्रित कर रहे हैं।

पिछले कुछ दशकों में मुस्लिम समुदाय में आंतरिक तौर पर जो कुछ हो रहा है, उसे समझना इसलिए जरूरी है ताकि हम यह जान सके कि हामिद दलवई और आरिफ मोहम्मद खान जैसे सुधारक क्यों कुछ विशेष नंहीं कर सके। समुदाय में सुधार की प्रक्रिया मुख्यत: उसमें व्याप्त असुरक्षा के भाव के कारण बाधित हो रही है। इस भाव के बढ़ने के दो कारण हैं - पहला, राष्ट्रीय स्तर पर सांप्रदायिक हिंसा, जिसके कारण इस समुदाय को जान-माल और रोजगार का बहुत नुकसान हो रहा है। दूसरा कई तरीकों से इस समुदाय को आर्थिक दृष्टि से हाशिए पर धकेला जा रहा है। इन दोनों कारणों से यह समुदाय दकियानूसी विचारों को गले लगा रहा है और रूढ़िवादी मौलानाओं का दबदबा बढ़ता जा रहा है।

वैश्विक स्तर पर तेल के संसाधनों पर नियंत्रण की राजनीति के चलते, इस्लाम के नाम पर आतंकवाद का उदय हुआ और उससे उभरा वैश्विक स्तर पर इस्लाम के प्रति भय का भाव और मुसलमानों का दानवीकरण करने की प्रक्रिया। आज मुस्लिम पहचान को समाज के लिए एक खतरे की तरह प्रस्तुत किया जा रहा है। इन दोनों के कारण हमारे देश में भी कट्टरपंथी नेतृत्व का मुस्लिम समाज पर नियंत्रण और प्रभाव बढ़ा है। बहुत पहले सन् 1992-93 की मुंबई हिंसा के बाद, मैंने अचानक पाया कि मेरे मार्ग दर्शन में शोध कर रहे अध्येता दिन में कई बार मस्जिद जाने लगे और मेरे एक साथी शिक्षक ने अपने उपनाम, जो पहले उनके धर्म को इंगित नहीं करता था कि जगह ऐसे उपनाम का प्रयोग करना शुरु कर दिया जिससे यह साफ हो जाता था कि वे मुसलमान हैं। आईआईटी मुंबई के परिसर में निवास करते हुए मैंने देखा कि गुजरात में सन् 2002 के बाद कैम्पस में मुस्लिम लड़कियाँ जो तब तक सलवार, कमीज या पेट और शर्ट पहनती थीं, अचानक बुर्का ओढ़ने लगी।

मक्का मस्जिद, मालेगाँव समझौता एक्सप्रेस और अजमेर में हुए बम विस्फोटों के बाद, पुलिस ने तुरत-फुरत बड़ी संख्या में मुसलमान युवकों को हिरासत में ले लिया और अदालतों से बरी होने के पूर्व, उन्हें कई साल सीखचों के पीछे गुजारने पड़े। इससे भी सुधार की प्रक्रिया

शेष पृष्ठ 23 पर

वादें हैं, वादों का क्या ? और, वादों का यूँ जुमला हो जाना

2014 के लोकसभा चुनाव के बाद भाजपा भारी बहुमत के साथ सत्ता से आयी, इस जीत के पीछे यूपीए सरकार गलतियां ही मुख्य कारण रहीं, और बाकी का काम बिके हुए संचार मीडिया के प्रचार ने कर दिया था, विपक्षी राजनीतिक दल न तो जनता को अपनी समझा पाये और न ही अपनी गलतियों से कुछ सीखने का प्रयास किया।

भाजपा ने धन और बल दोनों से जबरदस्त प्रचार किय, वह जबरदस्त बहुमत से जीत गई, उसी जबरदस्त प्रचार में भाजपा के प्रधानमंत्री उम्मीदवार (अब प्रधानमंत्री) मोदी ने जनता से जबरदस्त वायदे किया थे, लेकिन सत्ता पर काबिज होने के एक साल बाद भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष के सरेआम कहे से इस बात का पता चला कि वे वायदे नहीं 'जुमले' थे, मसलन हर साल दो करोड़ रोजगार देना, विदेश में छिपे कालेधन को भारत लाकर सबके बैंक खातों में पन्द्रह लाख जमा करना, अवैध रूप से भारत में रहने वाले बांग्लादेशियों को बाहर करना और पाकिस्तान को प्रेमपत्र लिखना बंद कर उसको उसी की भाषा में जवाब देना–सब जुमले हो गये, हाँ, प्रधान सेवक, चौकीदार या फिर उन्हीं के शब्दों में फकीर का हवाई जहाज बिना किसी पूर्व कार्यक्रम के पाकिस्तानी की धरती पर उतर जायेगा, चुनाव प्रचार के दौरान ऐसा किसी वादे में नहीं कहा गया था, मतलब चुनाव प्रचार के दौरान जो कहा गया वो नहीं हुआ और जो नहीं कहा गया वो हुआ, रुकिए, आपको कहीं ऐसा तो नहीं लग रहा है कि न कि मैं कोई व्यंग्य कर रहा हूँ? नहीं, मैं याद कर रहा हूँ वादों को वादा-खिलाफी के बाद।

सुप्रीमकोर्ट के एक पूर्व न्यायाधीश और भारतीय प्रेस परिषद् के तत्कालीन अध्यक्ष जस्टिस मार्कंडेय काटजू ने 2012में एक विवादित बयान दिया था कि ''मैं कहता हूँ कि नब्बे प्रतिशत भारतीय बेवकूफ हैं, उनके सिर में दिमाग नहीं होता, उन्हें आसानी से बेवकूफ बनाया जा सकता है,'' जस्टिस काट्जू ने यह भी कहा कि मात्र दो हजार रूपये देकर दिल्ली में सांप्रदायिक दंगे भड़काए जा सकते हैं, दंगे भड़काने के लिए किसी धार्मिक स्थान पर मात्र शरारत करने की जरूरत होती है और उसके बाद लोग लड़ना शुरु कर देते हैं-

जस्टिस काट्जू ने दावा के साथ ऐसा कहा था, क्यों कहा था, यह शोध का विषय हो सकता है, किन्तु यदि आपने भीष्म साहनी का उपन्यास 'तमस' पढ़ा है, तो आपको उसकी शुरुआत याद होगी जो 'नत्थू' नामक एक दलित द्वारा सूअर के मारे जाने से होती है। एक सरकारी कारिंदा अली उससे यह काम कराता है और इस काम के लिए उसे पाँच रूपये देता है। पाँच रूपये उस जमाने में एक दलित के लिए बहुत बड़ी रकम है। उस दलित को नहीं मालूम कि जब मरे हुए सुअर आसानी से मिल सकते हैं, सब एक जिन्दा सुअर को क्यों मरवाया जा रहा है, लेकिन जब सुबह नत्थू के द्वारा मारा गया सूअर शहर की मस्जिद की सीढ़ियों पर खड़ा मिलता है तो उसे समझ आ जाता है कि उससे सुअर क्यों मरवाया गया है। सूअर को मरवाकर मस्जिद की सीढ़ियों पर डालने की साजिश अंग्रेज करते हैं, लेकिन वे कभी सामने नहीं आते। उसे क्रियान्वित करने का काम एक मुसलमान कारिंदा मुराद अली करता है जो एक दलित की मदद से सूअर मरवाता है और एक इसाई दलित कालू के हाथों मस्जिद की सीढ़ियों पर डलवाता है, वह पूरा घटनाक्रम जस्टिस काट्जू के कहे उससत्य को सामने लाता है कि दंगे होते नहीं करवाये जाते हैं।

आज देश में राष्ट्रवाद की लहर है,मीडिया भी इस लहर के प्रचार में जी-जान लगी हुई है, चिंगारी को शोलों में तब्दील करना बखूबी जानती है हमारी मीडिया, इसी राष्ट्रवाद की लहर और उन्माद के बीच देश में आपात नोटबंदी की घोषणा कर दी गई, जनता देशहित में अपनी मेहनत की कमाई बैंक में डालने को मजबूर हो गयी, सौ से अधिक बैंकों / एटीएम की कतार में लग कर मारे गए, इस पर उठे सवाल का जवाब सवाल से ही दिया गया - सैनिक सीमा पर देश के लिए अपनी जान देते हैं, तो जनता देश के लिए इतना नहीं कर सकती है क्या? नोटबंदी ऐलान के वक्त कहा गया था - इससे कालेधन पर अंकुश लगेगा, सीमापार से आतंकवाद हरकतों की कमर टूट जाएगी, वैसे, सीमा पर आज जो हालात है, उससे आप वाकिफ़ है न ?

पहले 'गाय' एक उपयोगी दुधारू चारपाया पशु महज

शेष पृष्ठ 24 पर

दोनो अलग - अलग आते थे
अगर बुद्ध आते थे पूरब से
तो बाघ क्या
कभी वह पश्चिम से आ जाता था
कभी किसी ऐसी गुमनाम दिशा से
जिसका किसी को
आभास तक नहीं होता था
पर कभी-कभी दोनों का
हो जाता था सामना
फिर बाघ आँख उठा
देखता था बुद्ध को
और बुद्ध सिर झुका
बढ़ जाते थे आगे
इस तरह चलता रहा
बाघ

फूल को हक दो, वह हवा को प्यार करे,
ओस, धूप, रंगों से जितना भर सके, भरे,
सिहरे, कांपे, उभरे,
और कभी किसी एक अंखुए की आहट पर
पंखुड़ी-पंखुड़ी सारी आयु नाप कर दे दे-
किसी एक अनदेखे-अनजाने क्षण को
नए फूलों के लिए।
गंध को हक दो वह उड़े, बहे, घिरे, झरे, मिट जाए
नई गंध के लिए।
बादल को हक दो-वह हर नन्हे पौधे को छांह दे, दुलारे
फिर रेशे-रेशे में हल्की सुरधनु की पत्तियाँ लगा दे,
फिर कहीं भी, कहीं भी, गिरे, बरसे, घहरे, टूटे-
चुक जाए-
नए बादल के लिए!
डगर को हक दो- वह, कहीं भी, किसी
वन, पर्वत, खेत, गली-गांव-चौहटे जाकर-
सौंप दे थकन अपनी,
बांहे अपनी
नई डगर के लिए.....

संग्रह-फरीदा खातून, गरीफा,नैहाटी, पं०बं०

कवि केदार नाथ सिंह का चले जाना

कवि केदारनाथ का चला जाना साहित्य की क्षति है। उनसे मेरी मुलाकात ठीक ज्ञानपीठ पुरस्कार घोषित होने से ठीक एक दिन पहले कमानी थियेटर, दिल्ली में हिन्दी अकादमी, दिल्ली के नाट्य फेस्टिवल में हुयी थी। कोलकाता की भीड़ में हम सभी शामिल रहे यहाँ की सभी संस्थाओं ने उनको रिले-श्रद्धांजलि दी है। हम उनको काव्यांजली के रूप में श्रद्धांजलि दे रहे हैं।

अगर धीरे चलो
वह तुम्हें छू लेगी
दौड़ों तो छुट जाएगी नदी
अगर ले लो साथ
वह चलती चली जाएगी कहीं भी
यहँ तक-कि कबाड़ी की दुकान तक
भी
छोड़ दो
तो वहीं अंधेरे में
करोड़ों तारों की आँख बचाकर
वह चुपके से रच लेगी
एक समूची दुनिया
एक छोटे से घोंघे में
सच्चाई यह है
कि तुम कहीं भी रहो
तुम्हें वर्ष के सबसे कठिन दिनों में भी
प्यार करती है एक नदी
नदी जो इस समय नहीं है इस घर में
पर होगी जरूर कहीं न कहीं
किसी चटाई
या फूलदान के नीचे
चुपचाप बहती हुई
कभी सुनना
जब सारा शहर सो जाए
तो किवाड़ों पर कान लगा
धीरे - धीरे सुनना
कहीं आसपास
एक मादा घड़ियाल की कराह की तरह
सुनाई देगी नदी।

संग्रह - अमरदीप कुलश्रेष्ठ, गुआहाटी

तीन पीढ़ियाँ

मुनमुन सरकार को याद करते हुए-सम्पादक
सलाम आजाद (कहानी के बांग्ला लेखक)
अनुवादक : मुनमुन सरकार

जगन्नाथ कॉलेज से ग्रेजुएशन की डिग्री पाने के बाद 'टीचर' की नौकरी चुन ली मधुसूदन विश्वास ने। नोवाखाली के अपने गाँव के मौजूदा कार्यक्षेत्र भाग्यकूल का कोई मेल न होने के बावजूद मधुसूदन को यह गाँव भा गया। भाग्यकूल के स्कूल में बांग्ला के शिक्षक के रूप में उन्होंने 10 नवम्बर, 1945 को कार्यभार ग्रहण किया। यह दिन उनके लिए एक और विशेष कारण से स्मरणीय है।

शिक्षक की नौकरी में बहाली के ठीक एक साल बाद इसी दिन उनकी पहली संतान मोहित का जन्म हुआ था। हालांकि उसने बी.ए. सेकेंण्ड इयर में पढ़ते हुए ही शादी कर ली थी। उसकी इन शादी से जुड़ा एक छोटा सा इतिहास भी है।

कॉलेज की छुट्टी पूरी हो जाने पर मधुसूदन को ढाका वापस लौटना पड़ता था। ढाका वापसी के बाद भी उसका मन शोभा के घर में पड़ा रहता था। शुरू के दो-चार दिनों तक उनका खाना-सोना ठीक से नहीं हो पाता था। क्लास में मन नहीं लगता था। शोभा को लेकर तब तक वे काफी कविताएँ लिख चुके थे। यह सब सोचने पर आज मधुसूदन को बड़ी हँसी आती है। शोभा को लिखी चिट्ठी पिताजी के हाथ लग जाने पर मधुसूदन को पिताजी द्वारा खबर भिजवाकर बेशक बुलाया गया था। घर पहुँचने के दूसरे दिन बेटे को लेकर बाजार जाते हुए रास्ते में मधुसूदन के पिता ने अचानक बेटे से पूछा - ''तुम शोभा से प्यार करते हो?'' पिताजी से इस तरह के अप्रत्याशित प्रश्न के लिए वे तैयार नहीं थे। डर और शर्म से सकुचा गए। बेटे से कोई जवाब न पाकर उन्होंने अपना सवाल दोहराया। डरते-डरते मधुसूदन ने कहा - ''जी।''

''तुम उससे शादी करना चाहते हो?''

मधुसूदन पिताजी के पीछे-पीछे चल रहे थे।

वे पिताजी का चेहरा नहीं देख पा रहे थे, लेकिन उनकी आवाज सुनकर समझ रहे थे पिताजी स्वाभाविक ढंग से ही पूछ रहे हैं। वे पिताजी से किसी बाघ की तरह डरते थे, हालांकि कई बार पिताजी बेटे के साथ दोस्त जैसा व्यवहार करते थे। इस वक्त की मधुसूदन को पिताजी एक दोस्त ही लग रहे थे। उन्होंने किसी तरह की हिचकिचाहट के बगैर 'हाँ' में जवाब दिया। इसके बारे में उनके पिताजी ने फिर कुछ नहीं पूछा। एक हफ्ते के भीतर ही वे शोभा को पुत्रवधू बनाकर ले आए। शादी के तेरह दिन बाद मधुसूदन को बुलाकर उन्होंने कहा - अब ढाका वापस लौटकर पढ़ाई-लिखाई में ध्यान दो।

जाड़े की शाम को भाग्यकूल की पद्मानदी के पट पर टहलना मधुसूदन को बहुत अच्छा लगता था। नदी के किनारे से होते हुए वे कभी पश्चिम में कामरगाँव की ओर चलते तो किसी दिन उलटी दिशा में यशलदिया की ओर। जाड़े के दिनों में पद्मा की छोटी-छोटी लहरें तट पर हौले से पछाड़ खाकर गिरतीं। मधुसूदन को लगता कि बलुही माटी की यह लम्बी परत शोभा की साड़ी का किनारा है और पद्मा नदी का नीला रंग उसकी साड़ी। वे तन्मय होकर अपनी इस नई खोज और इसके सौन्दर्य को निहारा करते।

भाग्यकूल स्कूल से सटा हुआ था हरेन्द्रलाल राय का कचहरी था। छत के अलावा पूरा घर लकड़ी का बना हुआ। इस तरह के नक्काशीदार लकड़ी के मकान भाग्यकुल में बहुत देखे थे मधुसूदन ने। शुरु-शुरू में वे हैरान रह जाते, मुग्ध भाव से सब कुछ देखते

रहते थे। इन मकानों के बगल में ही खड़े पक्के मकान उन्हें जरा भी आकर्षित न करते। वे पहले से ही पक्के मकान देखते आ रहे थे। भाग्यकुल में नौकरी न मिलने पर वे लकड़ी के बने इन मनोरम मकानों को देखने से शायद वंचित ही रह जाते। भाग्यकुल के उत्तर में बालासुर हैं। इस गाँव में यदुबाबू का मकान है। इनके मकान के बगीचे में दुनिया भर के तमाम दुर्लभ फूलों का संग्रह देखकर वे और भी हैरान रह गए थे।

मधुसूदन को नौकरी करते एक साल भी पूरा नहीं हुआ था कि इसी बीच वे दो बार नोवाखाली में शोभा और मोहित के साथ छुट्टी बिता आए थे। स्कूल के कॉमन रूम में बैठे एक दिन वे दूसरे शिक्षकों के साथ गप्पें लड़ा रहे थे तभी चपरासी ने आकर उनके हाथ में एक तार थमाया। तार में विस्तार से कुछ नहीं लिखा था। बस घर जाने के लिए जरूरी सन्देश दिया गया था। उसी दिन उन्होंने भाग्यकुल घाट से स्टीमर पकड़ा नारायणगंज से होते हुए नोवाखाली जाने के लिए। घर पहुँचकर मधुसूदन पिताजी से फिर नहीं मिल पाए। उपमहादेश के दो हिस्सों में बँटने के एकसाल पूर्व मधुसूदन के नोवाखाली जिले में दो साम्प्रदायिक दंगा हुआ, उसी दंगें में उनके पिता को जान गँवानी पड़ी। जिस मुसलमान रोगी को पैसे न रहने के कारण मधुसूदन के पिता ने मुफ्त दवा पिलाई थी, उसी रोगी के धारदार हथियार ने उनकी जिन्दगी ले ली। पिता की मृत्यु के शोक से मधुसूदन को जितना आघात पहुँचा उससे कहीं ज्यादा सशंकित किया पड़ोसी मुसलमानों के व्यवहार थे। सिर्फ अकेले मधुसूदन ही सशँकित नहीं हुए बल्कि कुछ मुसलमानों का व्यवहार देखकर इलाके के लगभग सभी हिन्दुओं को हैरानी हुई।

वापस भाग्यकूल लौटकर भी उन्होंने इलाके के हिन्दुओं में वही आतंक पाया। इतने शौक से बनाए लकड़ी के अपने घरों को छोड़कर, बचपन की यादें छोड़कर, माँ-बापं की स्मृति छोड़कर भाग्यकूल के हिन्दू झुंड के झुंड सुरक्षित जगहों पर चले जा रहे हैं – कलकत्ता चौबीस परगना या फिर पश्चिम बंगाल में कहीं और।

मधुसूदन ने निश्चय किया कि अपना देश जन्म-भूमि छोड़कर वे कहीं नहीं जाएँगे। क्या वे अपनी माँ को छोड़ सकते हैं?

सहकर्मियों में एक दो को छोड़कर सबका व्यवहार अचानक बदल जाने से मधुसूदन को बहुत खराब लगा। दुखी हुए वे। अचानक लोग इस तरह बदल कैसे जाते हैं? मन ही मन में राजनेताओं को कोसते हैं जिनके कारण भारत, विशेषकर बंगाल का दो हिस्से में बँटवारा हुआ। इस तरह मानसिक पीड़ा सहते हुए उनके चार वर्ष और निकल गए।

हमेशा की तरह मधुसूदन धोती-कुर्ता पहनकर स्कूल आए। पश्चिम बंगाल और असम में मुसलमान अत्याचार का शिकार होने के कारण पूर्वी पाकिस्तान चले आ रहे हैं, स्कूल के मौलवी साहब ने उन्हें यह खबर दी। वे किसी भी तरह मौलवी साहब को समझा नहीं पा रहे थे कि यह कट्टरपंथियों-दंगाइयों का काम है। कुछ कट्टरपंथियों के कारण पूरे समुदाय को दोषी ठहराना, गाली देना उचित नहीं है। यह शोभा नहीं देता। लेकिन मौलवी साहब ने एक तरह से मधुसूदर पर सीधे आक्रमण किया, उनके पहनावे और धोती को लेकर भी कटूक्ति की। इस अस्वस्थ बहस को तूल न देकर वे वहाँ से चले गए।

अगले दिन वे गयना से नाव मैं बैठ और सदरघाट जाकर उतर गए। राय बाजार में उनकी बहन रहती थीं। उससे मिलने के लिए सदरघाट से नवाबपुर होते हुए मधुसूदन राय बाजार के लिए चल पड़े। नवाबपुर पार करने से पहले ही रथखोला के पास कम उम्र के कुछ लड़कों ने उन्हें घेर लिया। एक झटके में उनकी धोती खोल दी। मधुसूदन हक्के-बक्के रह गए। इससे भी ज्यादा आश्चर्यजनक घटना अगले ही पल घटित हुई।

एक लड़के ने 'या अली' कहते हुए उनके पेट में चाकू भोंक दिया। वे निढाल होकर गिर पड़े। मधुसूदन के शरीर से खून की धार बह निकली। मधुसूदन की मौत की खबर उनकी पत्नी और नन्हा बेटा कभी नहीं जान पाए। इस तरह मधुसूदनों के खून से पूर्वी पाकिस्तान की धरती रक्तरञ्जित होने लगी, हालांकि खुदीराम और सूर्यसेन की वारिस पीढ़ी की जेब में धारदार हथियार रहते थे। लेकिन इसका प्रयोग उसने मानवता के पक्ष में करना सीखा था, मनुष्य को गोली से उड़ा देने के लिए नहीं। हथियार जेब में होते हुए भी वे नीरव दर्शक बने रहे। कोई-कोई भारत भाग गया।

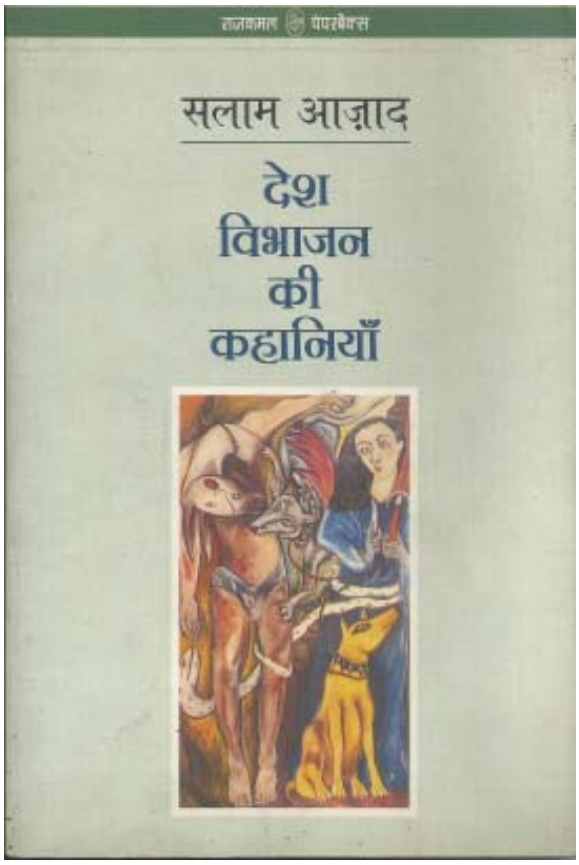

मधुसूदन के घर न लौटने पर उनकी पत्नी भगती हुई भाग्यकुल आई। वहाँ पति को न पाकर ढाका गई। काफी तलाश के बाद भी पति का कोई पता नहीं चला। आखिरकार असहाय शोभा विश्वास इकलौते पुत्र को छाती से लगाए नोवाखाली वापस लौट गई।

शोभा विश्वास के नाते -रिश्तेदार उन्हे बार-बार अपने पास चले आने के लिए खबर भेजने लगे। सिलीगुड़ी से उनको बड़े भाई लगातार खबर भेज रहे थे कि शोभा उनके पास चली जाए, लेकिन वह भला कैसे चली जाए? जिस मिट्टी में उसका जन्म हुआ, बड़ी हुई, मधुसूदन को पाया, अपनी इकलौती सन्तान मोहित को पाया। जो मिट्टी उसके सबसे चहेते व्यक्ति के खून से सनी हुई है, उस मिट्टी को छोड़कर भला कैसे जा सकती है शोभा विश्वास? मझली दीदी एक के बाद एक पत्र भेज रही है चौबीस परगना से। उन पत्रों को पढ़कर शोभा विश्वास को गुस्सा आता है। वह क्या उन लोगों की तरह कृतघ्न है ?

मोहित की पढ़ाई-लिखाई और खुद का जीवन चलाने के लिए शोभा विश्वास को कठिन संघर्ष करना पड़ रहा है। मोहित ने पिछले वर्ष ढाका विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र में दाखिला लिया है, ढाका के जगन्नाथ हॉल (होस्टल) में रहता है। साठ के दशक के मध्य में हुए साम्प्रदायिक दंगे में सौभाग्य से वह बच गया था, हालांकि उसके जैसे अनेक लोगों को लाश में तब्दील हो जाना पड़ा था। इसके बावजूद वह देश छोड़कर नहीं गया। एम.ए. में अच्छा रिजल्ट आने के कारण उसे कॉलेज में लेक्चर की नौकरी मिल गई। नौकरी मिलने के साल-भर पूरा होने से पहले ही शोभा विश्वास बेटे पर शादी करने के लिए दवाब डालने लगी। माँ का अकेलापन दूर करने के लिए मोहित शादी के लिए तैयार हो गया।

उस वक्त शेख मुजीब के आह्वान पर पूरे देश में असहयोग आन्दोलन चल रहा था। माँ यह आन्दोलन वगैरह नहीं समझना चाहती थी उसके राजी होते ही बेटे से पूछा - तुम्हारी कोई पसन्द है ? मोहित के सामने

जया की तस्वीर उभर आई। मोहित के पक्के दोस्त विप्लव की छोटी बहन है जया। इडेन कालेज में पढ़ती है। यों इतने दिनों तक जया को वह बहन की निगाह से देखता आया था। उसी जया को शोभा विश्वास मोहित की पत्नी बनाकर ले आई।

पुत्रवधू को साथ लेकर शोभा विश्वास नोवाखाली घूमने गई। काम का दवाब रहने के कारण मोहित साथ नहीं जा सका, हालांकि मोहित ने कहा था कि कुछ दिनों बाद काम-काज का दबाव कम होते ही वह भी साथ जा सकता है, लेकिन शोभा विश्वास तो बिल्कुल अड़ ही गई थी - बहू को देखने के लिए गाँव के लोग बेचैन है। उसकी बहुत इच्छा थी कि वे मोहित की शादी नोवाखाली में करेगी। मोहित के एतराज के चलते ऐसा नहीं हो सका, लेकिन बेटे की शादी ढाका में होने के बावजूद पुत्रवधू को गाँव के घर में न ले जाने तक उसे चैन नहीं था। उस घर की मिट्टी ही आखिर मोहित के शरीर में पहली बार लगी थी। उस घर की मिट्टी में ही उसके विश्वास के अवलम्ब रहे पुरुष के पदचिन्ह हैं।

तेईस मार्च की सुबह पत्नी और माँ को मोहित ने ट्रेन पर बैठा दिया था। कमलापुर स्टेशन से घर पहुँचने पर अचानक उसे रुलाई आ गई। क्यों आई रुलाई, मोहित खुद नहीं समझ पाया।

पच्चीस मार्च की रात को पाकिस्तानी सैनिकों ने ढाका की जिन जगहों को सबसे ज्यादा अपने निशाने पर रखा और क्षति पहुँचाई, जगन्नाथ हॉल उनमें से एक था। इस हाल में आवासिक शिक्षकों के एक क्वार्टर में मोहित रहता था। उसके पड़ोसियों में से कोई-कोई अपने कमरे में ताला लगाकर दूसरी जगह चला गया था।

उस वक्त कितनी रात रही होगी ? बारह या उससे थोड़ा अधिक रहा होगा। जगन्नाथ हॉल की पूर्वी दीवार को तोड़ते हुए टैंक-मोर्टार चलाते सैनिकों ने अन्दर प्रवेश किया। मोहित जब तक जाग रहा था। गोली की आवाज सुनकर वह फर्श पर लेट गया। हमलावार उर्दू और अंग्रेजी मिश्रित जुबान में कुछ कह रहे थे। खिड़की को थोड़ा सा खोलकर उसने बाहर देखना चाहा कि किया हो रहा है,तभी उसके फ्लैट के दरवाजे पर लात मारने की आवाज आई। मोहित के दरवाजा खोलकर खड़े होते ही दो बन्दूकधारी उसके फ्लैट में घुस गए। एक आदमी मोहित की और चाइनिज राइफल का निशाना साधे खड़ा हो गया अन्दर फ्लैट के कमरों में दोनों टार्च की रोशनी में कुछ ढूँढ़ रहे थे। थोड़ी देर बाद मायूस होकर वे दरवाजे के पास लौट आए। मोहित की पीठ पर राइफल सटाकर एक ने ट्रिगर दबाया। राइफल की गोली शरीर में प्रवेश करने से पहले मोहित सब कुछ समझ रहा था, लेकिन जिस बर्बर वाहिनी को इंसानियत या धर्म किसी का ज्ञान नहीं, उसके आगे गिड़गिड़ाने का मतलब है खुद को तुच्छ बनाना, मानवीयता को अपमानित करना। इन नर-पशुओं के पूर्वजों के आगे उसके पिता, उसके दादा ने जिन कारणों से मिन्नत नहीं की, मोहित ने भी उन्हीं कारणों से दया की भीख नहीं मांगी।

वह फर्ज पर गिर पड़ा। उसके शरीर से खून की धार निकलकर मिट्टी में मिलती जा रही थी - उसी मिट्टी में जिसने उसके पिता, दैवतुल्य दादा ने खून को आसानी से चूस लिया था।

चयन - मीनाक्षी सांगानेरिया

यह पुस्तक हमें प्रकाश दास ने दी।

पत्राचार का पता :

सम्पादक - सदीनामा

48/49A, Swiss Park, Kolkata-700 033

West Bengal, India ☎ : 9231845289

E-mail : jjitanshu@yahoo.com

बांग्ला दलित साहित्य पर दो दिवसीय संगोष्ठी

नकुल मल्लिक जी का फोन आया 'आमादेर मीटिंग होवे 3-4 मार्चे आसते होवे' यह हमारे लिए एक मित्र का प्रेम भरा आमंत्रण था। 3 मार्च को तो नहीं पहुंच पाये पर 4 मार्च को सियालदह सुबह 8.10 की बनगांव लोकल से मसलंदपुर पहुँचे, करीब पौने दस बजे। बगल में ही था नूतनपल्ली, मछलंदपुर आम्बेदकर सोशल वेलफेयर सेन्टर। स्टेज का नाम था ''मृनाल कांति विश्वास मंच'' पता चला कि एक दिन पहले के मंच का नाम था करवीन्द्रलाल विश्वास मंच। उद्घाटन किये कृष्णपद नायक, प्रधान अतिथि, धूर्जटि नस्कर, विशिष्ट अतिथि डॉ॰ विराट वैराग्य, कपिलकृष्ण ठाकुर, विषय परिचय कराया नकुल मालिक ने विषय था ''समय परिवर्तन में साहित्य और सांस्कृतिक आंदोलन की कोई भूमिका नहीं।'' कार्यक्रम के बाद प्रतिनिधि सभा आयोजित हुई। चार मार्च को सबसे पहले शुरु हुआ कवि सम्मेलन, इस लम्बे चले कवि सम्मेलन का संचालन कर रहे थे कपिलकृष्ण ठाकुर दर्जन से ज्यादा कविओं के कविता पाठ के बाद 'तीन दशक का दलित साहित्य आन्दोलन' 'सफलता और व्यर्थता' इसमें वक्तत्य रखा डॉ0 पुष्प वैरागी तथा सुकृतरंजन विश्वास ने, संचालन किये धूर्जरि नस्कर ने। महत्वपूर्ण बात रही कि यहाँ दलित पत्रिकाएँ और पुस्तकों की प्रदर्शनी लगी थी, वही मछलंदपुर आम्बेदकर सोशल वेलफेयर सेन्टर'' ने एक पुस्तकालय खोला है जहाँ पर पुस्तकें सहज उपलब्ध होगी। यहाँ पर पुस्तकें दान भी दी जा रही थीं, आप भी दे सकते हैं। संम्पर्क करें :-नकुल मल्लिक - 9748885100/ 9681273773 या राजू दास - 94331680011 या मेल करें rajudas0003@gmail.com.

–सदीनामा न्यूज ब्यूरो

नहीं रहे चौथा सप्तक के वरिष्ठ स्वदेश भारती

कोलकाता, अज्ञेय द्वारा संपादित चौथा सप्तक में कोलकाता से एकमात्र वरिष्ठ कवि स्वदेश भारती का निधन लगभग 80 वर्ष की उम्र में गत रात दो बजे हो गया। वे कुछ दिनों से फेफड़ों में संक्रमण की वजह से बीमार थे। वे अपने पीछे पत्नि जया तथा दो पुत्रों संजय (बेंगलुर) तथा आनंद (हैदराबाद) सहित भरा पूरा परिवार छोड़ गए हैं, गौरतलब है कि वे अपने समय के एक चर्चित कवि तथा उपन्यासकार थे। उनके लगभग 30 काव्य संग्रह 10 उपन्यास तथा 40 से अधिक संपादित ग्रंथ है। उनके उपन्यास 'औरतनामा' पर उन्हें वर्ष 1989 मे उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा प्रेमचन्द सम्मान प्रदान किया गया था और 2001 में साहित्य भूषण सम्मान दिया गया। कोलकाता पर उनकी पूरी एक काव्य-कथा-कलकत्ता ओ कोलकाता, चर्चा में रही जो उन्होंने अपने बांग्ला के शीर्षस्थ कवि मित्र सुभाष मुखोपाध्याय और शक्ति चट्टोपाध्याय को समर्पित की थी। उनके संयोजन में हुए देश के विभिन्न राज्यों में कई अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन, अंतर्राष्ट्रीय साहित्य संगोष्ठियों तथा राष्ट्रीय कवि सम्मेलनों ने हिन्दी की विकास यात्रा में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। वे अपनी साहित्य पत्रिका रूपाम्बरा का संपादन पिछले 50 वर्षों से कर रहे थे। उनके निधन पर वरिष्ठ कवि नवल, मृत्युंजय उपाध्याय,रावेल पुष्प, संजय बिन्नानी, सेराज खान बातिश सहित कई रचनाकारों ने शोक प्रकट किया।

महान वैज्ञानिक स्टीफन हॉकिन्स नहीं रहे।

महान वैज्ञानिक हॉकिन्स नहीं रहे। साहित्य का विज्ञान को प्रणाम। उनमें बहुत कुछ था वो एक चमत्कार की तरह थे। 1974 में ब्लैक हॉल्स पर असाधारण रिसर्च करते उसकी थ्योरी मोड़ देने वाले स्टीफन हॉकिन्स साइंस की दुनिया में सेलेब्रेटी हैं। इस वैज्ञानिक के दिमाग को छोड़कर उनके शरीर का कोई भी भाग काम नहीं करता है।

अपनी सफलता का राज बताते हुए उन्होंने कहा था कि उनकी बीमारी ने उन्हें वैज्ञानिक बनाने में सबसे बड़ी भूमिका अदा की है, बीमारी से पहले वे अपनी पढ़ाई पर ज्यादा ध्यान नहीं देते थे लेकिन बीमारी के दौरान उन्हें लगने लगा कि वे लंबे समय तक जिन्दा नहीं रहेंगे तो उन्होंने अपना सारा ध्यान रिसर्च पर लगा दिया, हॉकिन्स ने ब्लैक हॉल्स पर रिसर्च की है।

स्टीफन हॉकिन्स की कुछ बातें जिन्होंने मेरी जिज्ञासा बढ़ाई।

1. अगली बार जब आपको कोई यह कहे कि आपने गलती की है तो उससे कहे कि गलती करना अच्छी बात हो सकती है क्योंकि बिना गलतियों के न तो तुम और न मैं ही जिन्दा रह सकता हूँ।
2. ज्ञान एक ऐसी शक्ति है जो आपको बदलाव को स्वीकार करने की क्षमता सिखाती है।
3. मैंने नोटिस किया है कि ऐसे लोग जो यह विश्वास करते हैं कि वही होगा जो भाग्य में लिखा होगा, वही सड़क पार करने से पहले सड़क को गौर से देखते हैं।
4. मैं एक ऐसा बच्चा हूँ जो कभी बड़ा नहीं हो पाया, मैं अभी भी 'कैसे' 'क्यों, का सवाल करता हूँ।
5. वे लोग जिन्हें उनके IQ पर बहुत घमण्ड होता है, वे दरअसल हारे हुए लोग होते हैं।
6. शारीरिक रूप से विकलांग लोगों के लिए मेरी सलाह है कि आपको आपके शरीर की कमी कुछ भी अच्छा करने से नहीं रोक सकती है, और इसका कभी भी अफसोस भी नहीं करना चाहिए, अपने काम करने की स्पिरिट में अपंग होना बुरी बात है।
7. पिछले 49 सालों से मैं मरने का अनुमान लगा रहा हूँ, मैं मौत से डरता नहीं हूँ, मुझे मरने की कोई जल्दी नहीं है, उससे पहले मुझे बहुत सारे काम करने हैं।
8. अपने बच्चों को स्टीफन ने टिप्स देते हुए कहा- पहली बात तो यह है कि हमेशा सितारों की ओर देखो न कि अपने पैरों की ओर, दूसरी बात कि कभी भी काम करना नहीं छोड़ो, कोई काम आपको जीने का एक मकसद देता है, बिना काम के जिन्दगी खाली लगने लगती है, तीसरी बात यह कि अगर आप खुशकिस्मत हुए और जिन्दगी में आपको आपका प्यार मिल गया तो कभी भी इसे अपनी जिन्दगी से बाहर मत फेंकना।
9. मनुष्य की सबसे बड़ी सफलताएं बात करने से हासिल हुई है और सबसे ज्यादा विफलता नहीं बात करने से हुई है, हम लोगों को हमेशा बात करने रहने की जरूरत है।
10. गुस्सा मानवता का सबसे बड़ा दुश्मन है, यह सभ्यता को बर्बाद कर देगा।

स्टीफन हॉकिन्स की महत्वपूर्ण किताबें :- ए ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ टाईम, द ग्रांड डिजाइन, यूनिवर्स इन नटशेल, माई ब्रीफ हिस्ट्री, द थ्योरी ऑफ एवरीथिंग

लालन शाह और कबीर

श्यामल भट्टाचार्य
9038705316
shyamal1964@gmail.com

(यह लेख 24 फरवरी 2018 को आईसीसीआर-कोलकाता केन्द्र में 'लालन के साथ चार घंटे ' कार्यक्रम में पढ़ा गया - सम्पादक)

लालन शाह बंगाल का बाउलपंथ के शिरोमणि फकीर थे, यह बाउलपंथ भारतभूमि का कोई नितांत नूतन या अलहदा सामाजिक-आध्यात्मिक आंदोलन नहीं थाष। यह भारत में प्रस्फुटित, पल्लवित और प्रसारित कई पंथों का सम्मिश्रण था। इनमें से मुख्यत: थे बौद्ध सहजिया, इस्लामिक, सूफीवाद एवं वेदांतिक वैष्णवी भक्ति। उत्तर भारत के विशिष्ट संत कवि कबीर, नानक और दादू और उनसे करीब चार सौ साल बाद आए लालन शाह इसी मिश्रित महान परम्परा के उत्तराधिकारी थे। इसलिए आश्चर्य नहीं की कबीर और लालशाह की कविता के दर्शन और भावों के साथ साथ भाषा, शैली और मुहावरों की समानताएँ है। साथ ही साथ, कुछ रोचक और महत्वपूर्ण भिन्नताएँ भी हैं। इस संदर्भ में कबीर और लालन शाह फकीर की तुलना अहम और श्रेयस्कर हो सकती है।

कबीर और लालन शाह दोनों का लालन-पालन लम्बे अरसे तक मुसलमान परिवार में हुआ। कबीर की परवरिश का एक जुलाहा मुसलमान परिवार हुई। लालन शाह ने अपनी युवावस्था में में ही सिराज साँई की शरण ली। साँईजी दरवेश बाउल थे और दरवेशों की शिक्षा दीक्षा मुसलमानों की तरह होती है। लालन शाह ने सिराज साई से दरवेशी वाउलपंथ की दीक्षा लेकर अपने आपको उनको समर्पित कर दिया, और वर्षों तक उनकी छत्रछाया में रहकर साधना की। कबीर ने तत्कालीन बनारस निवासी संत रामानन्द से निर्गुण रामभक्ति की दीक्षा ली।

दोनों परम ब्रह्म के विश्वासी थे जो निर्गुण और निराकार है। लालन ने इन्हें साधारणत: साँई या निरंजन कहके पुकारा। कबीर के लिए वे राम थे। ''कबीर राम को आकार-प्रकार, द्वैत-अद्वैत, भाव-अभाव के परे समझते थे।''

कबीर के भगवान अविगत, अकथ, अचिंत्य और अनुपम थे। लालन के साँई निगुढ़, निर्गम और अलक्ष्य (अलख) थे। लालन के पड़ोसी (इष्टदेव) का ''हस्त पद, स्कंध और माथा'' नहीं था। कबीरदास ने भी कहा :

''जाके मुँह माथा नहीं, नाही रूपक रूप,
पहुप-बास थैं पातला, ऐसा तत्त अनूप।।''

यद्यपि लालन शाह के साँई निर्गुण थे फिर भी उन्होंने अपनी कविता में सूफी संतों एवं वैष्णव भक्तों की तरह उनके सगुण रूप का वर्णन किया है। उन्होंने परम ब्रह्म की ''अवतार और अवतारों'' दोनों कहा है। एक गीत में उन्होंने लिखा है :

''कभी बनते साकार, कभी हो जाए निराकार,
कोई कहे आकार-साकार,
अपार होने के कारण हैं धुँधले''

इस प्रकार अनेक गीतोनं में परम ब्रह्म की स्वेच्छा से की गई सांसारिक लीला और भव्यता एवं विचित्रता का वर्णन है।

कबीर और लालन शाह फकीर दोनों महायान बौद्ध धर्म के सहजियापंथ के दो प्रमुख तत्त्वों में विश्वास करते थे। यह था: परम ब्रह्म की अनुभूति इसी देह, देश और काल में सम्भव है और दूसरा, मानव-प्रेम से ही परम पुरुष की प्राप्ति होती है। यही मानव एकता का आधार है। कबीर ने कहा है, ''मोको कहाँ ढूँढो बंदे, मैं तो तेरे पास में।'' इसी को लालन ने दुहराया है: ''इसी

मानुष में वह मानुष विराजता है।'' मानवता और देवत्व की अविभाज्यता दोनों की साधना का एक मुख्य तत्व है। इसे कबीर ने इस सतत स्मरणीय दोहे में अभिव्यक्त किया है।

''लाली मेरे लाल की, जित देखीं तित लाल
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल।''

लालन शाह ने इसी विचार को अत्यन्त सरल लोकभाषा में कुछ इस तरह से व्यक्त किया है।

''लालन कहे, अपने मुकाम में ढूँढ़ो
दूर अधिक न जावो।''

और

''आसपास की तो है न खबर,
क्या फायदा जीने से दिल्ली लाहौर''

पुनः

''अपने घर का पता ही नहीं,
इच्छा करता पर को पहचानूँ''

कबीर और लालन शाह दोनों ने अपने इष्टदेव से प्रत्यक्ष नाता जोड़ने में विश्वास किया और इसके लिए उन्होंने भक्ति का अपना मार्ग बनाया। दोनों के विचार ज्ञान-मार्ग की जटिलता एवं विषमता में पड़ने से कोई फायदा नहीं। लालन शाह ने कहा है: ''रति से ही मति झरती है।'' कहीं कबीर कहते हैं: ''पोथी पढ़ि-पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय, ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय।''

दोनों संत-कवियों ने अपनी वांछित को प्राप्त करने के लिए सहज साधना के मार्ग को अपनाया। कबीरदास ने कहा: 'साधो, सहज समाधि भली'। लालन शाह ने सलाह दी : ''सरल भाव से जो निहारेगा, ऐसा रूप वह देख पाएगा।''

वैष्णव संतों की भक्ति के लिए निष्काम होने की अपरिहार्यता ने वैष्णवपंथियों के लिए जो एक रूप धारण किया है वह है - जीते ही मरना।

कबीर ने इस संदर्भ में बहुत ही अच्छा प्रश्न उठाया है :

''हौं तोहि पूछि हे सखि, जीवत क्यों न मराई.
मुँया पीछे सत्त करे, जीवत क्यों न कराई।''

मैं तुमसे पूछता हूँ सखि, जिन्दा ही क्यों न मरें, मरने के बाद जो सद्‌गति कराएँ, जीते हुए क्यों न कराए।

लालन ने कहा :

''मरने के पहले जानो मरना,
गुरु रूप का करके ध्यान।''

यहाँ जीते-जी मरने का अर्थ है, मन के सारे रिपुओं - काम, क्रोध, लोभ, मद,मोह और मात्सर्य पर विजय प्राप्त करना।

कबीर और लालन दोनों परम्परागत धर्म के परे थे। अपनी पहचान को हिंदू या मुसलमान के रूप में दर्शाने की उनकी कभी मंशा नहीं थी। और न तो वे समाज को धर्म का आधार पर फिरकों में या जात-पात के भेदभाव के अनुसार बाँटने के पक्ष में थे। लालन शाह ने कहा है :

''सब पूछते लालन फकीर हिंन्दू या मुसलमान,
लालन कहे जानूँ न मैं, मेरा क्या संधान।''

कबीर ने इसी भाव को इस प्रकार व्यक्त किया है-

''अरे भाई दोई कहाँ से मोहि बतावो
विचिहौ भरम का भेद लगावो।''

या

''''हमरे राम रहीम करीमा
कैसो अलह राम सति सोई।''

लालन ने इसी बात को नाविक और घाट की उपमा के माध्यम से कहा है-

''एक ही घाट पर आना-जाना,
एक ही माँझी खेता नाव।''

पुनः

''दो रूप सृष्टि है, इसका क्या प्रमाण।''

कबीर और लालन दोनों ने परम ब्रह्म तक पहुँचने के लिए बाह्य अनुशासन, आचरण और आडम्बर को न केवल अनावश्यक समझा, बल्कि इन्हें वांछित लक्ष्य के मार्ग में बाधक भी माना। इसलिए दोनों ने इन आचारों पर प्रहार के लिए अपनी भाषा की व्यंग्यात्मक शक्ति का खुल के प्रयोग किया। दोनों संत वेद-पाठ, शास्त्र-निर्धारित कर्मकांड, जैसे तीर्थयात्रा, ब्रत, मूर्तिपूजा आदि के प्रबल विरोधी थे। इन्हें पूर्वजन्म या स्वर्ग-नरक की परिकल्पना में विश्वास नहीं था।

इन विषयों के बारे में उनकी निम्नलिखित उक्तियाँ सुप्रसिद्ध और स्मरणीय दोनों हैं -

कबीर :

''हौं तो तुरक किया करि सुन्नत,
औरतियों सौं का कहिए।''

लालन :

''सुन्नत देने से होता मुसलमान,
नारी का तब क्या होगा विधान?
ब्राह्मण चीन्हें जनेऊ प्रमाण
फिर ब्राह्मणी को चीन्हें कैसे रे?''

धार्मिक रीति के खिलाफ:-

इस विषय में कबीरदास का यह पद बहुत ही प्रसिद्ध है :

''मुल्ला होकर बाँग जो दवे,
क्या तेरा साहब बहरा है
कौड़ी के पग तेवर बाजे,
सो भी साहब सुनता है।''

शास्त्रों के खिलाफ :-

कबीर

''पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोई।''

लालन :

''पढ़ने से न मिलता पदार्थ,
आत्मतत्व से ज्यों गया भटक।''

पुन:

''वैदिक मेघ के घोर अंधकार में
उदित होते नहीं दिनमणि।''

तीर्थ, व्रत और माला जपने के खिलाफ :

कबीर :

''माला फेरत जग मुआ, मिटा न मन का फेर,
कर का मनका डार दे, मन का मनका फेर।''

लालन :

''तीर्थव्रत करे जिसके लिए
इसी शरीर में उपलब्ध।''

या

''रहता जिसका मानुष मन में,
वह क्या जपता माला।''

पुनर्जन्म एवं स्वर्ग-नरक के खिलाफ :

कबीर :-

''बिन गोपाल ठवर नहिं कबहुँ,
नरक बात धौ काहीं,
अनजाने को सरग-नरक है,
हरि जाने को नाहिं।''

लालन शाह :

''असल में इसे मानता नहीं मन,
अरे बकाये के लोभ में नगद पावन
कौन छोड़ता इस जग में''

पुन:

''पाप-पुण्य की बात मैं किससे कहूँ,
एक देश में जो पाप है, अन्य देश में पुण्य वही।''

कबीर और लालन दोनों प्रबल गुरुवादी थे। दोनों के गुरु अपने जमाने के प्रसिद्ध संत थे। दोनों ने ही अपने गुरु की नसीहत के अनुसार अपनी साधना का मार्ग चुना और उस पर अटल भाव से कायम रहे। दोनों का विश्वास था कि यदि सांसारिक विषमताओं एवं कुकर्मों के कारण साधना की रोशनी धूमिल पड़ जाए तो गुरु की चरण-शरण से ही प्रकाश मिलेगा।

''पावन हार के रूप न रेखा,
सतगुरु होई लखावै।''

लालन ने गुरु को अपार खेवैया माना जिसके बिना पार उतरना मुमकिन नहीं है। उन्होंने यह भी कहा है कि ''गुरु के बिना कोई धर्म नहीं''। उन्होंने जोर देकर कहा :

''गुरु रूप में लीन जिसका हृदय,
यमराज से उसे कोई नहीं भय।''

गुरु के प्रति इन दोनों संतों के पूर्ण समर्पण का एक पक्ष है, बार-बार अपने हृदय की दुर्बलता और मन की मलिनता को कबूलना। ये दोनों कहते हैं कि गुरु की कृपा से ही ये दूर होंगे।

लालन शाह और कबीरदास दोनों ने अपने जीवन में औपचारिक शिक्षा प्राप्त नहीं की। लालन शाह की मृत्यु के दो सप्ताह के अन्दर प्रकाशित 'हितकरी' में लिखे निबंध में कहा गया: ''वे स्वयं पढ़ना-लिखना नहीं जानते थे''। कबीरदास ने खुद कहा: ''मसि कागद छुआ नहीं।''

फिर भी आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के शब्दों में इनकी कविताओं में ''छंद आयोजना, उक्ति-वैचित्र्य और अलंकार-विधान पूर्ण रूप से स्वभाविक था।''

इन दोनों संतों के अनेक अपमान और उपमेय समान हैं। जैसे कि, सृष्टि के बारे में कबीर ने कहा है: ''अवधू कुदरति की गति न्यारि''। लालन शाह के एक गीत की प्रथम पंक्ति है। ''यह बड़ी अजब कुदरति''।

सृष्टि के वैचित्र्य और रहस्यों का चित्रण दोनों ने करीब-करीब एक ही किस्म की उपमा से की है। कबीर ने कहा है: -

''तरुवर एक पेड़ बिन ठाढ़ा, बिन फूलों फल लागा,
साखा-पत्र कछू नहीं ताके, अष्ट गगनमुख बागा।''

लालन शाह ने इसी भाव को इस प्रकार प्रकट किया है:

''मूल विहीन उस फूल की लता
डाली विहीन उसका पता।''

अथवा

''बनाया है ऐसा घर
शून्य के ऊपर पुचारा करके।''

काव्य-कौशल में कबीरदास और ललन शाह की सबसे बड़ी नजदीकी है व्यंग्यकार के रूप में। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कहा है, ''सच कहा जाए तो आज तक हिन्दी में ऐसा जबरदस्त व्यंग्यकार पैदा ही नहीं हुआ।'' यह लेखक बांग्ला साहित्य के व्यंग्य-लेखन के बारे में इतने आधिकारिक रूप से कुछ नहीं कह सकता। लेकिन, ललन शाह के जिस काव्यगुण ने इसको सर्वाधिक प्रभावित किया वह है व्यंग्यकार के रूप में उनकी असाधारण क्षमता।

साधु-संतों के रिवाजों पर गहरा व्यंग्य कसते हुए कबीर ने कहा है :

''मन न रँगाए, रँगाए जोगी कपड़ा,
कनवा फड़ाय जटवा बढ़ौले,
दाढ़ी बढ़ाय जोगी, होय गैले बकरा।''

ललन शाह ने इस भाव को प्रकट करने के लिए करीब-करीब ऐसी ही उपमा दी है :

''मन न मुड़ाये केश मुड़ाने से, मिल सकता क्या रतन।''

सम्पादक मण्डल

उप-संपादक	: तितिक्षा तथा पापिया भट्टाचार्य
संपादकीय सलाहकार	: यदुनाथ सेउटा
संपादक	: जितेन्द्र जितांशु
विशेष सहयोग	: आरती चक्रवर्ती, एच॰ विश्ववाणी तथा राजेन्द्र कुमार रूईया (अमेरिका)

सभी अवैतनिक हैं।

हाइडेस्पीज का युद्ध : कड़ी-२

भारतीय सेना और युद्धकला प्राचीनकाल से आज तक :
लेखक - कर्नल गौतम शर्मा
प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस
कश्मीरी गेट, दिल्ली - 110006 - से साभार

यहाँ, भारत में लड़े गए उस महान युद्ध का अध्ययन करना अनुचित न होगा, जिसमें भारतीय तलवारें पहली बार संसार की एक महानतम जाति की तलवारों से टकराई। कहा गया है कि युद्धकला में सिकन्दर का कोई सानी नहीं था। दुर्भाग्यवश, इस महान युद्ध की साक्षियां हमें विदेशी लेखकों से ही प्राप्त हुई है।

उस समय उत्तर-पश्चिमी सीमान्त पर सिकन्दर के पहुँच जाने के बाद उत्तर भारत के दो शक्तिशाली राजाओं ने महत्वपूर्ण भूमिकाएँ अदा कीं। इनमें एक था तक्षशिला का राजा, जो सिन्ध और झेलम नदियों के बीच के क्षेत्र का स्वतंत्र शासक था। दूसरा पुरु था, जो झेलम के दूसरी ओर पूर्व के प्रदेश पर राज्य कर रहा था। आज के पाकिस्तान के झेलम, गुजरात और शाहपुर के जिले, मोटे रूप से, उसके राज्य में रहे होंगे। पुरु असाधारण आकार-प्रकार का व्यक्ति था और अत्यन्त महत्वाकांक्षी था। गद्दी पर बैठते ही उसने अपने को बहुत शक्तिशाली बना लिया था। उसने अपने राज्यों को रावी के पार तक और पहाड़ियों में आज के जम्मू के पूंछ और नौशेरा जिलों तक फैला लिया था। पश्चिम में उसने तक्षशिला के राजा का कुछ प्रदेश भी दबा लिया था। दोनों राजघरानों में गहरी शत्रुता थी और जब देश पर आक्रमण का संकट मंडराया तो इस शत्रुता ने प्रकट रूप ले लिया। तक्षशिला के राजा ने सिकन्दर की सहायता करने का फैसला किया। इस प्रकार हम देखते हैं कि भारत पहुँचने पर सिकन्दर ने देश के राज्यों को एक-दूसरे का शत्रु पाया। दुर्भाग्यवश, एक भारतीय ने ही देश का द्वारा एक विदेशी के लिए खोला।

दर्रों पर पहुंचकर सिकन्दर ने अपनी सेना को दो भागों में बांट दिया। एक भाग हिफेस्टन और परडिकाज के अधीन सीधे मार्ग से सिन्धु नदी की ओर बढ़ा। इसमें पैदल सेना की तीन ब्रिगेड, आधे घुड़सवार अंगरक्षक और पूरी अनियमित घुड़सवार सेना थी। इस हिस्से का काम सिकन्दर के पहुँचने से पहले नदी को पार करने का प्रबंध कर लेना था। दूसरे हिस्से में हाइपेस्पिस्ट नामक गोल ढालधारी सैनिक, पैदल सेना की एक ब्रिगेड, थ्रेसियन पैदल सेना, धनुर्धारी, घुड़सवार भालेबाज और शेष घुड़सवार अंग-रक्षक थे। यह भाग सिकन्दर के अधीन पहाड़ियों से आगे दक्षिण की ओर इस उद्देश्य से बढ़ा कि उस क्षेत्र के कबीलों को वश में किया जाए और तब उत्तर की ओर मुड़कर नदी-तट पर दूसरे भाग से मिल जाया जाए। सिकन्दर को मार्ग में कुछ विरोध का सामना करना पड़ा। वह एक महीने से अधिक तक अटका रहा। जिस तरीके से उसने अपने विरोधियों को कुचला, वह उसके महान नाम पर एक धब्बा है। एक से अधिक क्षेत्रों की पूरी आबादियों को उसने सिर्फ इसलिए तलवार के घाट उतार दिया, क्योंकि उन्होंने कड़ा विरोध किया था। असैनिक आबादियों के साथ ऐसा व्यवहार मध्यकाल में भारत पर हुए आक्रमणों के दौरान एक आम चीज बन गई थी।

अटक के लगभग 25 किलोमीटर उत्तर में ओहिन्द (हुन्द) में नावों का एक पुल बनाया गया और 326 ईसापूर्व के बसन्त में पूरी सेना पार उतर गई। ओहिन्द के स्थान पर सिन्ध नदी की चौड़ाई लगभग छह मील है

और अटक में पुल के निर्माण तक अतीत युगों के बीच पार करने का यही परम्परागत स्थल रहा है। इस स्थल पर अब भी कुछ किलेबंदियों के खंडहर पड़े हैं। तक्षशिला का राजा आक्रमणकारी के साथ आ मिला और उसने उसका स्वागत किया।

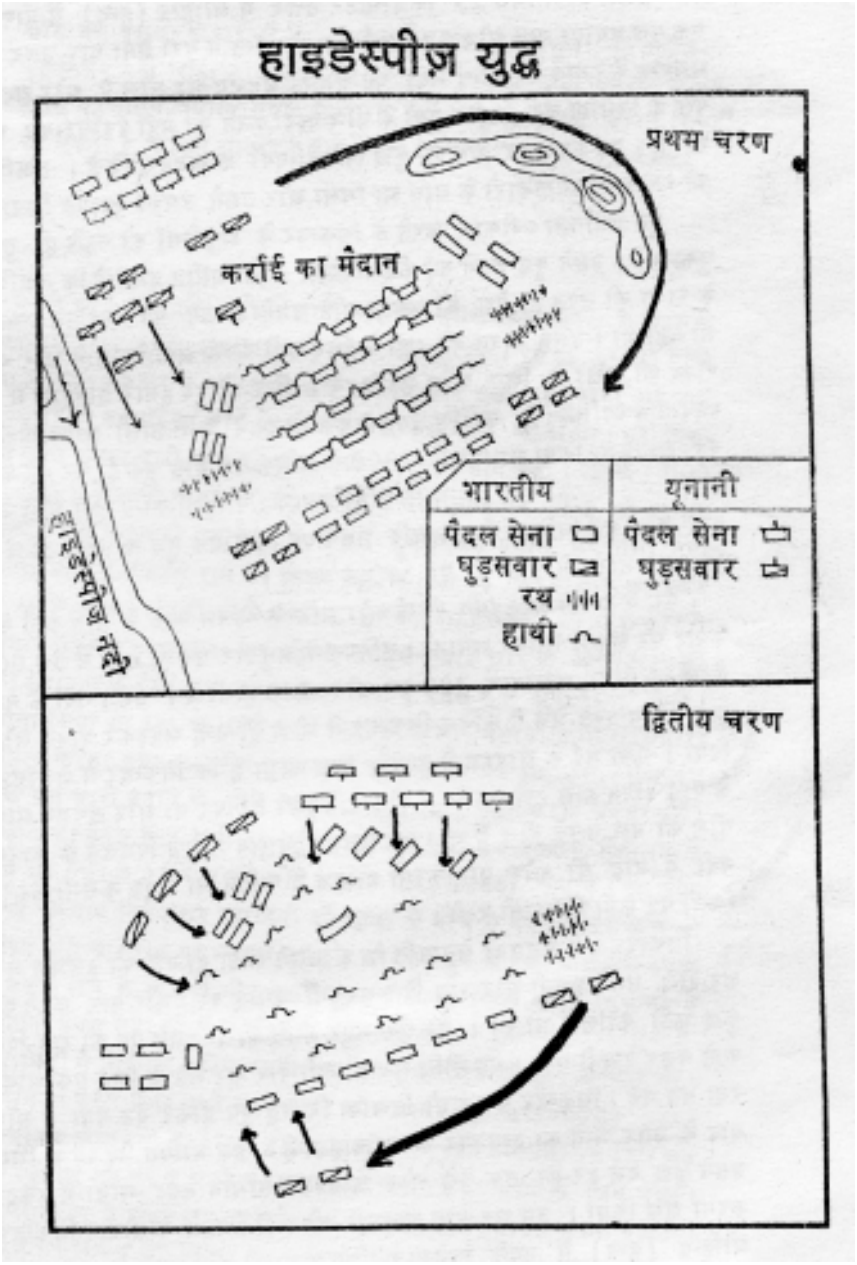

पुरु अधीनता स्वीकार करने के सिकन्दर के अनुरोधों को पहले ही ठुकरा चुका था। उसने युद्ध करने का फैसला किया। ऐसा प्रतीत होता है कि तक्षशिला के राजा की तरह ही देश की एकता और उसकें संगठन का भाव उसके मन में भी नहीं था। उसने भारत की रक्षा के लिए नहीं, सिर्फ अपने सम्मान और अपने राज्य की रक्षा के लिए शस्त्र उठाये थे। फिर भी पुरु हमारे इतिहास में एक स्मरणीय व्यक्तित्व है, क्योंकि उसने अकेले ही इतने शक्तिशाली आक्रमणकारी का मुकाबला किया था। यद्यपि 2000 से अधिक वर्ष बीत चुके हैं, पर वह अभी तक, अपनी वीरता और आपनी सच्चाई के कारण पीढ़ियों का प्रेरणा-स्रोत बना रहा है। यह निश्चित है कि यदि उसने यह निर्णायक युद्ध न लड़ा होता तो सिकन्दर भारत में बहुत दूर पूर्व तक घुस जाता।

पुरु ने अपनी सेना आगे बढ़ाई और आज के झेलम कस्बे के पास कहीं नदी के तट पर अपना शिविर लगाया। एरियन के अनुसार उसकी सेना में 30,000 पैदल, 4,000

घुड़सवार, 300 रथ और 200 हाथी थे। उसने नदी के पास कुछ अग्रिम दस्ते भेजे थे लेकिन सिकन्दर ने शीघ्र ही उन्हें खदेड़कर वापस लौटा दिया। ऐसा मई के आरम्भ में हुआ। कहा जाता है कि सिकन्दर ने जलालपुर के पास पड़ाव डाल रखा था। पुरु ठीक क्षायें दूसरे तट पर था और लगभग आधा मील का जल उनके बीच में था। उस समय हिमालय में वर्फ पिघलने के कारण नदी में बाढ़ थी और पार करना वास्तव में कठिन था। पुरु ने सभी सम्भव स्थलों पर कड़ी निगरानी रखी।

सिकन्दर एक अनुभवी सेनापति था। उसने शीघ्र ही युद्ध की हलचल शुरु कर दी। उसने अपनी ओर रात-दिन सरगर्मी बनाए रखी और पार करने की कुछ झूठी कोशिशें भी की। यह एक चतुर नीति थी। इससे पुरू को यह नीति अन्तत: नदी पार कर लेने के लिए एक आवरण बन गई। सिकन्दर ने यह भी दिखाया कि वह चुप होकर बैठ गया है और बाढ़ के उतर जाने का इन्तजार करना चाहता है। इस घोषित उद्देश्य के लिए उसने कुछ दल दूर-दूर तक भेजे और आवश्यक सामान बड़ी मात्रा में इकट्ठा करना शुरु किया। इन छह-सात सप्ताहों की कड़ी तैयारी के दौरान सिकन्दर ओहिन्द (हुन्द) में पहले इस्तेमाल किए गए नदी पार करने के सारे साज-सामान को वहाँ ले आया। इस हलचल की कोई जानकारी पुरु को न मिल सकी।

इस बीच सिकन्दर ने लगभग 34 किलोमीटर उत्तर में पार करने का एक अच्छा स्थल खोज निकाला। इस प्रकार एक अंधेरी और तूफानी रात में लगभग 11,000 आदमियों और घोड़ों के साथ उसने नदी पार कर ली थी। जब सिकन्दर की इतनी सेना अपनी चपटी नौकाओं में वस्तुत: पार हो चुकी, तभी पुरु के गुप्तचरों ने उसे देखा और उस समय इतनी अधिक देर हो चुकी थी कि नदी -तट पर उपस्थित थोड़े-से सैनिक कुछ भी नहीं कर सकते थे। नदी में पेड़ों से ढका एक बड़ा द्वीप था। इस ओर के रक्षक इस कारण भी इस शत्रुसेना के पार करने को न देख सके। सबसे पहले सिकन्दर इस पार उतरा और उसके पीछे पूरी सेना बिना किसी विशेष विरोध के इस पार आ गई। इसमें हाइपेस्पिस्ट घुड़सवार-धनुर्धारी, पैदल और लगभग 5,000 घुड़सवारों शामिल थे। एक अनुमान के अनुसार उस दिन सिकन्दर ने लगभग 53,000 घुड़सवारी और 15000 पैदलों को युद्ध में झोंका। यह संख्या बढ़ी-चढ़ी मालूम पड़ती है। इसमें कोई संदेह नहीं कि नदी पार करने का कार्य असाधारण दिलेरी, उत्कृष्ट व्यवहारकुशलता और चतुराई का काम था। इस तरह सिकन्दर ने विरोधी को बुरी तरह आश्चर्यचकित कर दिया, क्योंकि उसकी अधिकतर सेना अब भी पहले की स्थिति में पड़ाव डाले पड़ी प्रतीत हो रही थी।

पुरु इस साहसिक प्रयास से घबड़ाने वाला नहीं था। उसने अपने पुत्र के नायकत्व में 2000 घोड़ों और 120 रथों की एक टुकड़ी मुकाबले के लिए भेजी। मुख्य सेना को उसने वास्तविक आक्रमण के लिए रोके रखा। सिकन्दर ने इस छोटी टुकड़ी को सरलता से कुचल डाला। इस युद्ध में पुरु का बेटा मारा गया और उसके सभी रथ या तो नष्ट हो गये या पकड़े गए। अब पुरु को निश्चय हो गया कि असल आक्रमण हो चुका है। वह अपनी पूरी सेना के साथ आगे बढ़ा। सिर्फ एक छोटी-सी सेना उसने वहाँ छोड़ दी जिससे कि नदी पार के शत्रु पर निगरानी रखी जा सके।

दोनों सेनाएँ कराई के रेतीले मैदान में आ भिड़ी। यह मैदान अधिक से अधिक पाँच मील चौड़ा था। इसके उत्तर और पूर्व में छोटी पहाड़ियां थीं और पश्चिम में नदी थी। पुरु ने अपनी सेना को गरुड़ व्यूह के रूप में रखा। उसने अपने 200 हाथियों को इस तरह जमाया कि वे मुख्य सेना का अग्रिम कवच बन जाए। ये आठ पंक्तियों में रखे गए और इन्हें शत्रु के घुड़सवारों के

दिलों में आतंक पैदा करने का काम सौपा गया। तीस-तीस मीटर की दूरी पर स्थापित ये हाथी पैदलों की दीवार में उठे बुर्जों के समान प्रतीत होते थे। नियमित दूरी पर खाली जगह छोड़ दी गई थी, जिसके बीच से पैदल सैनिक हमला कर सके और साथ ही शत्रु के घुड़सवारों और पैदलों की रक्षा-पंक्ति में घुस आने से रोका सकें। पैदल सैनिकों को दोनों बाजुओं में और पृष्ठ में भी रखा गया था। रथों को दोनों पार्श्वों में जमाया गया था और उनके पीछे घुड़सवारों को रखा गया था। पुरु इस मजबूत मोर्चाबंदी के केन्द्र में रहा। रथ भारी-भरकम और असुविधाजनक थे। युद्ध की हलचल में इनकी गतिविधि को कठिन बनाते थे। इनमें चार घोड़े जुते थे। छह सिपाही इनमें चलते थे, जिनमें दो धनुर्धारी, दो ढालधारी और दो रथवान थे। पैदल सैनिकों के पास एक भारी दुधारी तलवार और कच्ची खाल की ढाल थी। इन हथियारों के अतिरिक्त हर व्यक्ति के पास एक भाला था। धनुष मानव-शरीर जितना लम्बा और तीर लगभग 2 मीटर लम्बा था। इसे छोड़ने केलिए धनुष को जमीन पर टिकाना और बायें पैर उसे दबाना पड़ता था। युद्ध की सरगर्मी में, जब तेज गति वाले घुड़सवार सभी दिशाओं में प्रखरता से घुसे आ रहे थे, इन लम्बे धनुष बाणों से काम लेना बहुत ही कठिन रहा होगा। घुड़सवारों के पास दो भाले और एक ढाल थी और शक्ति और अनुशासन में सिकन्दर के सैनिकों से बहुत ही निम्न कोटि के थे। इस सेना के साथ पुरु के पास संख्या में शत्रु से घुड़सवारों को छोड़ कर 4:1 के अनुपात की श्रेष्ठता थी। दूसरी ओर हाथियों का मुकाबला करने क लिए सिकन्दर के पास कुछ भी नहीं था।

सिकन्दर अपने घुड़सवारों का नेतृत्व करता हुआ मैदान में आगे बढ़ा। पैदल सेना ठीक उसके पीछे थी। जैसे ही पुरु दीख पड़ा उसने अपनी सेना को रोक दिया और पैदलों के आ मिलने तक अपनी सेना को आराम दिया। इस बीच उसने पुरु के युद्धतंत्र का अध्ययन किया और अपनी योजनाएँ बनाई। कहा जाता है कि पुरू की मोर्चाबन्द विशाल सेना को देखकर वह सहम छठा और बोला :

कम से कम मेरे साहस के तुल्य खतरा आज मेरे सामने है। अब जंगली जानवरों और असाधारण शक्ति वाले सैनिकों के साथ मुकाबला है।

विशाल हाथियों की पंक्तिबद्ध सामने देखकर, और उनके पीछे भारी संख्या में पैदलों को देखकर सिकन्दर ` फैसला किया कि सीधा हमला न किया जाए। संख्या की दृष्टि से कम सेना होने के कारण उसने गतिशीलता पर अधिक निर्भर किया। उसने योजना बनाई कि घुड़सवारों और घुड़सवार तीरन्दाजों को लेकर पहले शत्रु के बायें बाजू पर हमला किया जाए। जब हमला चल रहा होगा और शत्रु को वस्तुत: आतंकित क रहा होगा तो पुरु के घुड़सवार संगठित होकर निश्चय ही अपने दायें से हटेंगे। इसके लिए सिकन्दर ने एक इन्तजाम किया। उसने कोयनस को दो रेजीमेन्ट घुड़सवार देकर पुरु के दाहिने बाजू को छोड़कर आते घुड़सवारों पर हमला करने के लिए और सेना के पृष्ठ को आतंकित करने के लिए नियुक्त किया। अन्तिम दौर में बाकी शक्ति केन्द्र पर टूट पड़ेगी और उसे कसकर दबोचेगी। उसने अपने सैनिकों से कहा :

हमारे भालों की असाधारण लम्बाई और उनकी शक्ति इन विशाल पशुओं इनके चालकों के विरुद्ध जितना आज काम आयेगी, उतना पहले कभी काम नहीं आई होगी। इनके सवारों की धरती पर गिरा दो और इन पशुओं के शरीर में ये भाले घुसेड़ दो। इन पशुओं की सहायता पर निर्भर नहीं किया जा सकता। ये हमारी अपेक्षा अपने ही पक्ष को अधिक हानि पहुँचायेंगे, क्योंकि संयम रहते तो इन्हें शत्रु के विरुद्ध प्रेरित किया

जा सकता है, लेकिन आतंकित होने पर ये अपनी ही सेना पर टूट पड़ेंगे।

युद्ध

पुरु ने कोई गतिविधि नहीं दिखाई, क्योंकि उसके क्रम-निर्देश के अनुसार तो पहले शत्रु को उसके अग्र भाग पर हमला करना था। इसका सामना पहले उसके हाथियों को करना था, उसके बाद रथों को और तब घुड़सवारों को शत्रु के बाजुओं को दबाना था और पैदलों को पीछे-पीछे आगे बढ़ना था। पर सिकंदर ने पहल बनाए रखी और वह अपनी योजना अनुसार आगे बढ़ा। उसके 1,000 तीरन्दाजों ने मजबूत घोड़ों पर चढ़कर पुरु के बायें बाजू पर तीरों की बौछार की। भारतीय धनुर्धारी सब पैदल थे, वे इस हमले का उचित मुकाबला नहीं कर सके, क्योंकि पिछली रात की भीषण वर्षा से फिसलन भरी जमीन पर अपने लम्बे, भारी-भरकम धनुषों की वे पक्की तरह टिका नहीं सके। जब बाईं ओर के घुड़सवार हमले का मुकाबला कर रहे थे, तो पुरु ने दाईं ओर के घुड़सवारों को उनकी सहायता के लिए जाने का आदेश दिया। इससे कुछ अव्यवस्था फैली । जब ऐसा किया जा रहा था, तभी स्वयं सिकन्दर अपने मेसीडोनियन घुड़सवारों का नेतृत्व करता हुआ भारतीय घुड़सवारों और पैदलों पर टूट पड़ा। श्रेष्ठतर सेना के इस भारी दबाब के नीचे भारतीय घुड़सवार पूरी तरह घबड़ा उठे। पृष्ठ भाग की पैदल सेना अभी तक सक्रिय नहीं हुई थीं, दूसरी ओर, फिसलन के कारण रथ तेजी से नहीं चल सके और उन्होंने भारी गड़बड़ी फैलाई। इस बीच कोयनस चुपचाप निकलकर पहाड़ियों की छाया के नीचे से बढ़ता हुआ पहले तो पुनर्गठित होते भारतीय 1पहाड़ियों की छाया के नीचे से बढ़ता हुआ पहले तो पुरु घुड़सवारों पर टूटा और तब पुरु के पृष्ठ भाग तक बढ़ता चला गया। शत्रु के बाजुओं और उसके पृष्ठ को अव्यवस्थित करके सिकन्दर ने अब अपनी पैदल सेना को केन्द्र की ओर बढ़ाया।

हाथियों ने निरन्तर कठिन बनती स्थिति को संभालने की पूरी कोशिश की। मेसीडोनियन पैदल सेना अपने लम्बे तीरों और भालों के साथ उनपर टूट पड़ी। इस अचानक आक्रमण से पागल होकर हाथी शत्रु की पंक्तियों पर टूटे। जब यह हो रहा था तब पुरु ने अपने घुड़सवारों को खाली जगह भरने के लिए भेजा। लेकिन सिकन्दर के घुड़सवार वहाँ थे और उन्होंने उन्हें वापस अपनी पंक्तियों में लौटने पर विवश कर दिया। भारतीय सेना अब बुरी तरह अस्त-व्यस्त हो चुकी थी। अंतिम दौर में सिकन्दर ने पुरु की मुख्य सेना पर चारों ओर से चोंटे की । जब तक सिकन्दर की पैदल सेना असल में सक्रिय हुई तब तक सभी विरोध बिखर चुका था। पुरु ने छोटे नायक अपने-अपने मोर्चों पर स्थिति को संभालन की भरसक कोशिश कर रहे थे। केन्द्रीय नियंत्रण समाप्त हो चुका था और भारतीय सेना पुरी तरह उखड़ चुकी थी। जब यूनानी जीत रहे थे तभी,युद्ध के अंतिम दौर में मुख्य मेसीडोनियन सेना ने योजनानुसार आकर आक्रमण किया। इस ताजे आक्रमण ने पुरु की हार को और जल्द निश्चित कर दिया। इस हार में हाथियों का भागना मुख्य कारण रहा। युद्ध लगभग आठ घंटे चला। पुरु बराबर अपने पीछे हटती सेना को संभालता रहा और यद्यपि उसके पूरे शरीर पर गहरे घाव लगे थे, उसने युद्धभूमि छोड़ जाने से इंकार कर दिया। अन्त में वह पकड़ा गया और सिकन्दर के पास ले जाया गया। इन दो महान योद्धाओं के बीच जो गुजरा वह इतिहास में सोने के अक्षरों में लिखा गया है। सिकन्दर ने पुरु से पूछा कि उसके साथ कैसा व्यवहार किया जाए ?

''एक राजा के समान।''

''कुछ और तुम्हें नहीं कहना है?''

''नहीं। 'राजा' शब्द में सब कुछ निहित है।''

अधिकतर हाथी या तो मारे गए थे या घायल थे। रथ उलट गए थे और नष्ट हो गए थे। भारतीयों की ओर 12,000 पैदल और 3,000 घुड़सवार हताहत हुए थे और लगभग 9,000 बन्दी बना लिए गए थे। अपने कुछ बड़े सेनापतियों की मृत्यु के अतिरिक्त पुरु ने अपने दो बेटे भी खोए थे। सिकन्दर की ओर के कुल लगभग 1,000 सैनिक काम आए थे।

सिकन्दर असल युद्ध शुरु होने के पहले ही आरम्भिक दौरों में नदी पार करने से झूठे उपक्रम करके और बाद में घुड़सवार और पैदल सेना के बड़े दस्तों को साहसपूर्वक नदी पार कराकर नैतिक दृष्टि से विरोधी को चक्कर में डाल चुका था। इस बात ने निश्चय ही पुरु के सन्तुलन को बिगाड़ दिया होगा। दिन के आरम्भ में सिकन्दर ने जो पहल अपने हाथ में ली, उसे उसने अन्त तक बनाए रखा। उसके नदी पार कर लेने के बाद भी अपनी बड़ी सेना के कारण पुरु एक अनुकूल स्थिति में था। लेकिन उसकी सबसे बड़ी कमजोरी उसके घुड़सवारों में निहित रही। रथ बहुत भारी और दिक्कत-तलब थे। हाथी मोर्चा बनाने और एक अच्छी सुरक्षित स्थिति पर जमे रहने में आदर्श थे, पर एक अत्यन्त गतिशिल सेना के मुकाबले वे बेकार थे। पैदल सेना यद्यपि संख्या में बहुत बड़ी थी, पर उसके पास भारी और असुविधाकर हथियार थे। उसने युद्ध में बहुत कम योगदान दिया और उसके आक्रमण एकदम प्रभावशून्य रहे। पुरु के तरीकों में बहुत अधिक कमी रही। वह तत्काल रक्षात्मक स्थिति में आ गया और उसने सिकन्दर की पैदल सेना को उससे आ मिलने का समय दे दिया। इस प्रकार, पहल आक्रमणकारी के हाथ में आ गई। युद्धतंत्र की दृष्टि से पुरु की यह बड़ी भारी गलती थी और इसकी उसने बहुत बड़ी कीमत चुकाई।

2000 वर्ष बाद, जैसी एक तोप नेपोलियन ने इस्तेमाल की थी, वैसी ही एक तोप यहाँ सिकन्दर द्वारा काम में लाई जाती देखी गई थी। युद्ध में मनोबल बनाए रखने के लिए तीन और एक का अनुपात होता है। अच्छे सेनापति मिलें तो अपने उद्देश्यों में आस्थावान एक सुसंगठित और सुप्रशिक्षित सेना किसी भी कठिनाई का मुकाबला कर सकती है। सिकन्दर एक तपा हुआ सेनापति था। कोयनस का आक्रमण उसकी शानदार चाल सिद्ध हुआ। यद्यपि इससे खतरा भी बड़ा भारी था, फिर भी सिकन्दर ने घुड़सवारों से शत्रु के बायें बाजू पर और पैदल सेना से अग्र पर लगातार हमले कराकर पहली कार्यवाही को आगे बढ़ाया और इस सबका उसे लाभ मिला। उसने रिजर्व दस्तों का भी उचित उपयोग किया। पुरु ने संख्या में अधिक सेना होते हुए भी रिजर्व का कोई प्रबन्ध नहीं किया था। वह तथ्य विदेशी को विजय दिलाने में एक और बड़ा कारण सिद्ध हुआ।

अब आर्थिक सहयोग देना हुआ और आसान

सहयोगकर्ताओं की सूची प्रतिमाह प्रकाशित होती है

SADINAMA

Current Account No.
03771100200213
PUNJAB AND SIND BANK
IFSC CODE : PSIB0000377
Bhawanipore Branch,
Kolkata (West Bengal)
SMS to Inform - 09231845289
PLZ SMS WITH YOUR FULL POSTAL ADDRESS & Transaction No. & Date

प्रकाशन प्रभार

राजेश्वर राय • मीनाक्षी सांगानेरिया • मारिया शमीम • रमेश कुमार कुम्हार

सचमुच सुशील थे, सुशील

कुलीना कुमारी
संपादक, महिला अधिकार अभियान
संपर्क : 9868909628, 9350718506
हिन्दी अकादमी, दिल्ली के विनय कुमार से प्राप्त

जैसे ही एक परिचित ने सूचना दी कि मशहूर साहित्यकार-व्यंगकार सुशील सिद्धार्थ नहीं रहे, लगा जैसे हृदय थम सा गया, विश्वास ही नहीं हो रहा था कि ऐसा, इतनी जल्दी हो सकता है। कुछ महीने पहले जब उनसे अंतिम भेंट हुई थी तो वो बिल्कुल स्वस्थ सेहतमंद थे, कभी उनके मुँह से बीमार व कमजोरियों की बात नहीं सुनी थी। फिर फेसबुक पर उनके पोस्ट के जरिये लगातार उनकी सक्रियता दिख रही थी वो अलग से। कभी-कभी फोन व व्हॉटसअप पर भी उनसे बात हो जाया करती थी लेकिन कभी बीमार व उदासी की उन्होने बात नहीं की थी । उनके बड़े व्यक्तित्व के बावजूद 'मिलनसारिता' उनकी प्रवृत्ति में शामिल थी तो इस वजह से कई बार मैं उनसे अपनी रचनाओं पर प्रतिक्रिया पूछती थी और वे सहर्ष बता भी देते थे। यद्यपि वे उम्र में मुझसे बड़े थे, बावजूद मुझे खुलकर बात करने की आदत थी किन्तु उन्होंने यह हमें एहसास नहीं दिलाया कि छोटे होने की वजह से मुझे संयमित होकर बातें करनी चाहिए। उनका व्यक्तित्व ही ऐसा था कि छोटे-बड़े सभी से उन्हें सहज होकर अथवा प्यार व आदर से उन्हें बात करते हुए पाया।

यद्यपि उनसे मेरा परिचय बहुत पुराना नहीं था, (बेशक उनकी लेखनी के जरिये उनका नाम पहले से जानती रही थी) मैंने पहली बार 2015 के नवम्बर में हिन्दी अकादमी के उपाध्यक्ष मैत्रेयी पुष्पा मेम के वाल पर मैम के साथ उनका फोटो देखा था। मुझे उनकी छवि देख लगा कि वे खास व्यक्तित्व के स्वामी होंगे, फिर मैत्रेयी दी ने उनके साथ वाला फोटो को शेयर किया था तो इसलिए भी लगा कि वे कोई गलत इंसान नहीं हो सकते। तब मैंने फेसबुक पर उन्हें मित्रता का निवेदन भेजा था । उन्होंने जब मुझे अपनी सूची में शामिल कर लिए तो हमारे बीच बातचीत होने लगी थी। मैंने उन्हीं दौरान एक चीज गौर की थी कि वे अपनी आईडी में गाय का फोटो लगाए हुए थे, शायद उस दौरान गाय माता है, का कुछ अधिक ही जोर था मगर मुझे यह पसंद नहीं था कि कोई स्वयं, माँ-बाप, जीवनसाथी अथवा बच्चा से ज्यादा जानवरों को सजाएँ। मैंने बातचीत बढ़ाते हुए उनसे बोली थी कि मुझे आपकी प्रिय चीज पता। वे बहुत आश्चर्यचकित हुए थे जैसे उन्होंने विश्वास ही नहीं हो रहा था कि नये-नये परिचय के बावजूद उनके बारे में, उनके प्रिय के बारे में कैसे जान सकता है ?

जब उन्होंने मुझसे पूछा कि कौन, तो मैंने 'गाय' का नाम यह कहते हुए लिया था कि अपनी आईडी में कोई व्यक्ति उसी को डालता है, जिसे सबसे ज्यादा प्यार करता है, आपने गाय को डाली तो गाय आपकी प्रिय हुई। साथ ही मैंने अपनी राय व्यक्त की थी कि किसी को भी स्वयं व अपनों से अधिक जानवरों को मान नहीं देना चाहिए और आश्चर्य, शायद उन पर मेरे इस तर्क का असर हुआ या पता नहीं उन्होंने क्या सोचा, उन्होंने गाय का फोटो अपनी आईडी से हटा दिया।

इस प्रसंग के बाद हम और खुलने लगे थे व बेहिचक किसी भी मुद्दे पर अपनी राय रखते। फिर कुछ महीने के बाद हमें उनसे किताब घर प्रकाशन में मिलने का अवसर मिला जब मैं अपने (उस दौरान तक अप्रकाशित) कविता संग्रह 'आवाज मेरे मन की' को लेकर उनका विचार लेना चाहा। उन्होंने मेरी कुछ कविताएँ देखी, मैत्रेयी पुष्पा, सुधा अरोड़ा व अनीता भारती जी आदि की प्रतिक्रियाएँ भी। मेरी लेखनी से वो खुश हुए और मुझे कविताओं के साथ-साथ अन्य विधाओं पर लगातार लिखने के लिए प्रोत्साहित किया।

उनके इस सुझाव पर जब मैंने महिला जनित घर-परिवार में फंसे होने की मजबूरी बतायी तो इस वजह को उन्होंने खारिज करते हुए कहा था ''मजबूरियाँ-परेशानियाँ तो सबके जीवन में...मैं भी दिनभर कार्यालय में काम करता हूँ, बावजूद मैं लगातार लिख रहा हूँ तो आप क्यों नहीं...! उनकी यह बात मेरे मन को प्रोत्हासित करती रही, आज भी करती है। जब भी मैं हारने लगती हूँ तो उनकी यह बात याद आती है। उसके बाद भी हम कुछ बार मिले, कभी किसी कार्यक्रम में तो इक-दो बार विश्व पुस्तक मेला में, पिछले साल के किताबघर वार्षिकी उत्सव में भी। वे व्यंग्यकार जरूर थे मगर बाहियात बातें या गंदा मजाक किसी से करते हुए मैंने उन्हें कभी नहीं पाया। दूसरों से खुश होकर मिलते-मिलाते ही देखा।

हाँ पिछले तीन-चार महीने से मेरी उनसे बात नहीं हो रही

थी, यद्यपि फेसबुक की पोस्ट जरूर दिख जाती थी और इसी से हम उनके बारे में जान जाते थे। यद्यपि मैंने गौर किया था कि पिछले दिनों वे खूब लिख रहे थे जैसे उन्हें एहसास हो चला हो कि जिन्दगी का कुछ पता नहीं, जो भी दिल में, सोच में, व्यक्त हो जानी चाहिए अथवा नयी पीढ़ी तक छोड़ देनी चाहिए।

लेखनी के क्षेत्र उनका योगदान बहुत बड़ा है। उनके चार व्यंग्य संग्रह-प्रीति न करियो कोय, मो सम कौन, नारद की चिंता, मालिश महापुराण। दो कविता संग्रह: बागन-बागन कहै चिरैया, एका (दोनों कविता संग्रह अवधी में)। इसके अलावा उनके संपादन में भी कई पुस्तकें आई जिसमें श्रीलाल शुक्ल संचयिता, मेरे साक्षात्कार: शिवमूर्ति, मेरे साक्षात्कार: मन्नू भंडारी, दस प्रतिनिधि कहानियाँ: उषाकिरण खान, दस प्रतिनिधि कहानियाँ: ऋता शुक्ल, दस प्रतिनिधि कहानियाँ: उषा प्रियंवदा, दस प्रतिनिधि कहानिया: चित्रा मृदुल, मैत्रेयी पुष्पा: रचना संचयन आदि शामिल है।

जिन दिनों मैं उनसे किताब घर प्रकाशन मिलने गई थी, उनका व्यंग्य संग्रह 'मालिश महापुराण' आया था जिसे उन्होंने मुझे स्वयं भेंट किया था (समीक्षार्थी, उसे हम पति-पत्नी दोनों ने पढ़ा था, मगर समीक्षा मेरे संपादक पति श्री सुधीर जी ने लिखी थीं।) उसे पढ़कर हमें खूब मजा आया। उनके व्यंग्य की सहजता व अभिव्यक्ति का अंदाज किसी का भी ध्यान आकृष्टि करता है व पाठक के अंतर तक असर करता है। हमें उम्मीद है कि आने वाले समय में उनकी पुस्तकें नये रचनाकारों के लिए प्रेरणा का काम करेगा।

किसी को कहा मालूम था कि अपनी नौकरी के साथ-साथ अपने लेखनी के प्रति समर्पित हमारे यह साहित्यकार इतनी जल्दी मात्र 60 वर्ष की अवस्था में 17 मार्च 2018 को हम सभी को छोड़कर चले जाऐंगे। मगर जाते - जाते अपने अनोखे कर्म व व्यवहार से उन्होंने जता दिया कि जब तक जीये, न केवल कर्मठता के साथ बल्कि अपने शौक व कलम की ताकत में भी संतुलन बनाकर रखें। आज वे हमारे बीच नहीं मगर उनके शब्द, लेखनी व बांटे गये सकारात्मक सोच हमेशा जिंदा रहेगी। उन्हें हम सभी के तरफ के सादर श्रद्धांजलि।

ईपीएफओ बेवसाइट पर पेंशनर पोर्टल का शुभारंभ

कर्मचारी भविष्य निधि संगठन (ईपीएफओ) ने पेंशनर पोर्टल https://epfindia.gov.in/PensionPaymentEnquiry की शुभारंभ किया है। इपीएफओ की बेवसाइट पर मौजूद इस पोर्टल से पेंशनर सभी पेंशन संबंधी जानकारी जैसे पेंशन भुगतान आदेश संख्या, पेंशनर भुगतान आदेश विवरण, पेंशनर पासबुक जानकारी, पेंशन जमा होने की तिथि, पेंशनर जीवन प्रमाणपत्र आदि की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

पेंशनर के जीवन प्रमाणपत्र की जमा न होने या अस्वीकार होने की दशा में जीवन प्रमाणपत्र की स्थिति संबधी जानकारी मिलने में सहायता मिलेगी। इसमें पेंशन रोके जाने जाने का विवरण और कारण की जानकारी भी मिल सकेगी।

ट्रैक e KYC

सदस्यों की सुविधा के लिए बेहतर ''ट्रैक e KYC'' सुविधा की शुरुआत की गई है। इससे आधार को यूएएन संख्या से जोड़ने की स्थिति और विशेष रूप से विवरण न मिलने की स्थिति में जानकारी मिलेगी।

ये सुविधा इपीएफओ की बेवसाइट पर www.epfindia.gov.in>>Online Service>>e-KYC Portal>>Track eKYC लिंक पर जाकर प्राप्त की जा सकती है।

इस सुविधा द्वारा इपीएफओ सदस्य अपने यूएएन संख्या के साथ आधार को जोड़ने का विवरण आनलाइन जांच सकते हैं। इस सुविधा द्वारा लाभ उठाने के लिए सदस्य को यूएएन संख्या देनी होगी। जिसके बाद सदस्य को "Track eKYC" पर क्लिक करना होगा। इसके बाद सदस्य को यूएएन संख्या के संबंध में वास्तविक विवरण प्राप्त होगा।

यह जानकारी पसूका, श्रम एवं रोजगार मंत्रालय, भारत सरकार से मिली।

किस तलाश में यह गाथा

प्रियदर्शन

अलका सरावगी हिन्दी के उन विरल उपन्यासकारों में है जिनका लेखन पारंपरिक आलोचना पद्धति को अक्सर नए मानक गढ़ने की चुनौती देता है। 'कलि कथा वाया बाइपास', 'शेष कादंबरी', 'कोई बात नही', 'एक ब्रेक के बाद' और 'जानकीदास तेजपाल मैंशन' जैसे अलग-अलग प्रविधियों और आख्यानों वाले उपन्यासों के बाद प्रकाशित उनका नया उपन्यास 'एक सच्ची-झूठी गाथा' बार-बार कथा-लेखन के नए औजार तलाशते और तराशते रहने की उनकी आदत का एक और प्रमाण है।

बेशक, यह उपन्यास उनके पिछले उपन्यासों के मुकाबले कलेवर में भी छोटा है और शिल्प में भी एकरैखिक है। लेकिन इस एकरैखिकता में भी उन्होंने कई तहें पैदा की है। कहानी बस इतनी है कि गाथा नाम की एक लेखिका ईमेल पर संपर्क में आए एक शख्स से मिलने बागडोगरा एयरपोर्ट पहुँच जाती है। उस शख्स ने वादा किया है कि वह उस लेने आ जाएगा। लेकिन इसके बाद उसका फोन स्विच ऑफ आ रहा है।

यह शुरुआत है। प्रमित सान्याल नाम का वह आदमी आया नहीं है और गाथा के दिमाग में लगातार उसके साथ चली बातचीत के टुकड़े गूंज रहे हैं। उपन्यास का असली खेल इसी टुकड़ा-टुकड़ा स्मृति के बीच बनता है। प्रमित एक रहस्यमय किरदार है - वह कभी लेखक लगता है, कभी नक्सली, कभी अराजक भटकावों से घिरा एक शख्स - लेकिन हमेशा बहुत तार्किक - वह कभी लेखक लगता है, कभी नक्सली, कभी अराजक भटकावों से घिरा एक शख्स - लेकिन हमेशा बहुत तार्किक और अक्सर गाथा की उसके साथ हुई बहसें जीवन और रचना की विडम्बनाओं पर केंन्द्रित रहती हैं। अध्ययन, विचार और संवेदना के साझा तंतुओं से बने अलका सरावगी के लेखन को पढ़ने का असली सुख इसी बातचीत में है। कभी लगता है, लेखक अपने पात्र के साथ संवादरत है। कभी लगता है, पात्र अपने लेखक को गच्चा दे रहा है। कभी यह दो लेखकों के बीच की बातचीत लगती है।

इस बातचीत के बीच कई गाठें बनती भी हैं और खुलती भी हैं। प्रमित सान्याल के मुताबिक वह सात साल की उम्र में अनाथ हो गया। उसे कई मांओं ने पाला-एक जर्मन मां, एक बंगाली मां, एक आदिवासी मां। वह अनाथालय में पला, कई तरह के उत्पीड़न झेलता और कई तरह के उत्पीड़नों से बचता अंतत: उसने अपना एक जीवन-दर्शन विकसित किया जिसमें उम्मीद आक्रोश है, बदल देने की चाहत जितनी मिटा देने की इच्छा है और खंडित सा व्यक्तित्व है जो लिखना तो चाहता है, मगर छपना नहीं, उपन्यास की कल्पना करता है, मगर शुरुआत नहीं। दूसरी तरफ एक लेखिका है जिसके भीतर कई तरह की स्मृतियाँ सिर उठाती है। वह अपनी सास को याद करती है जो अपनी ससुराल में कठोर अनुशासन में रही, मगर पहली बार अपनी बहू के विदेश जाने की बात सुनकर पुलकित हो उठती है, वह सास की एक सहेली को याद करती है जिसके लिए अपने छोटे से विश्वास पर अमल उसका सबसे बड़ा अभिमान है।

ऐसे प्रसंग और भी हैं - स्मृति, उम्मीद और बहस के गलियारों से निकलते हुए। इन सबके बीच, सभ्यता-संस्कृति, मनुष्य, ईश्वर, धर्म, आस्था, अभ्यास, राजनीति, क्रांति, कविता सबकुछ चले आते हैं - दुनिया के सारे महाकाव्यों को नए सिरे से लिखने की चाहत भी और यह अहसास भी कि 'तुम एक खाली खोल हो आदमी का, तुम्हारे अंदर भूसा भर दिया गया है।'

निस्संदेह, इस उपन्यास को धीरज से पढ़ना पड़ता है। इस पूरे स्पंदन का आनंद तभी है जब आप एकाग्र होकर इस बहस का हिस्सा हों। अलका सरावगी के पुराने पाठकों को लग सकता है कि वह उपन्यास 'कलि कथा' या 'शेष कादंबरी' की तरह बहुपरतीय नहीं है। इसके बावजूद यह कई तरह की अनुगूंजों से भरा उपन्यास है जिसे पढ़ते हुए अलका सरावगी की लेखकीय क्षमता एक बार फिर आश्वस्त करती है - यह ख्याल आता है कि वे हमारे समय के बड़े लेखकों में हैं।

किसी भी बड़ी रचना को इस अहम सवाल का सामना करना पड़ता है कि वह अंतत: कहां ले जाती है? इस उपन्यास के संदर्भ में कहे तो शायद 'उत्तर सत्य' या 'पोस्ट ट्रूथ' कहलाने वाले इस युग में लगातार पुख्ता हो रहे इस अनुभव तक कि सत्य का कोई एक रूप नहीं होता। या कम से कम सत्य इतने सपाट नहीं होते कि उन्हें तत्काल समझ लिया जाए - स्वीकार या खारिज कर दिया जाए। हालांकि इन तमाम रूपों के बीच एक संवेदनशील आंख यह बात बहुत करुणा के साथ समझ सकती है कि यह दुनिया अन्याय पर टिकी है, सभ्यता इंसानियत की तरह की खरोचों को ढंक कर विकसित हुई है, कि अंतत: एक बेहतर मनुष्य या जीवन की तलाश ही किसी गाथा का लक्ष्य हो सकती है - भले उसे ढूँढने में पूरी उम्र निकल जाए।

एक सच्ची-झूठी गाथा: अलका सरावगी, राजकमल प्रकाशन, 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियांगज,दिल्ली-110002, 150 रूपए

अलका सरावगी : 2/10, शरत बोस रोड, कोलकाता-20

पृष्ठ 1 का शेषांश

मुसलिम समुदाय.....

बाधित हुई। शिक्षा प्राप्त करने के बाद मुस्लिम समुदाय का एक बड़ा हिस्सा बहुत आतुर था परन्तु बाटला हाउस मुठभेड़ और आजमगढ़ और भटकल जैसे स्थानों के दानवीकरण ने शिक्षा को उनकी प्राथमिकता नहीं बनने दिया।

इस परेशानहाल समुदाय में सुधार की प्रक्रिया कैसे सफल हो सकती है ? जैसा कि हर्ष मंदर ने लिखा है, इस समुदाय का सम्पूर्ण राजनैतिक हाशियाकरण हो चुका है। साम्प्रदायिक दंगों के चलते वे अपने मोहल्लों में सिमट गए हैं। सन् 1992-93 की हिंसा के बाद मुंबई के नजदीक मुम्बरा अस्तित्व में आया तो 2002 के बाद, जुहापुरा। किसी डरे-सहमे और अपने में सिमटे समुदाय में किस हद तक सुधार लाया जा सकता है? कई विवेकशील और प्रबुद्ध मुसलमानों ने अपने समुदाय में शिक्षा को प्रोत्साहन देने के सघन प्रयास किए। अपनी एक अमरीका यात्रा के दौरान मुझे कई ऐसे मुसलमानों से मिलने का मौका मिला जो वहाँ अलग-अलग पेशों में थे। वे सब इस बारे में एकमत थे कि भारतीय मुसलमानों में शिक्षा को प्रोत्साहन दिए जाने के जरूरत है और वे इसके लिए भी तैयार थे कि वे भारत में इस समुदाय के लिए शिक्षण संस्थाओं की स्थापना में आर्थिक उपलब्ध करवाए और युवा मुसलमान लड़कों व लड़कियो के लिए वजीफों की व्यवस्था करें। इससे उन प्रयासों का मजबूती मिलेगी जो गुजरात में जे एस बंदूकवाला और देश भर में मुसलमानों की कई संस्थाएँ कर रही हैं।

आज देश में दक्षिणपंथ का जोर बढ़ रहा है और चुनाव जीतने के लिए नेताओं को अपने हिन्दू होने का दंभ भरना आवश्यक हो गया है। इसके साथ ही, ''जो लोग भारत में रह रहे थे, वे सब हिन्दु है (मोहन भगवत्) जैसे जावे, मुसलमानों को आतंकित कर रहे हैं। इसी के चलते असगर अली इंजीनियर जैसे लोग, जिन्होंने इस्लाम का मानवतावादी चेहरा दुनिया के सामने रखने का प्रयास किया और समुदाय मे सुधार की नींव रखी, उन्हें मुख्यधारा से बाहर कर दिया गया। मुस्लिम समुदाय आज एक दुविधा में फँसा हुआ है। उसका केवल राजनैतिक हाशियाकरण ही नहीं हुआ है बल्कि उसे घृणा का पात्र बना दिया गया है। इसके लिए इतिहास के साम्प्रदायिक संस्करण का उपयोग किया गया और यह दिखाने का प्रयास किया गया कि हिन्दू, मुस्लिम राजाओं के हाथ प्रताड़ित हुए थे।

जहाँ तक हामिद दलवई या आरिफ मोहम्मद खान जैसे लोगों का सवाल है, उनके प्रयासों की सराहना करने में हम गुहा के साथ है परन्तु हम सबको यह भी समझना होगा कि मुस्लिम समुदाय को एक कोने में ढकेला जा रहा है। आज भी देश के विभाजन और कश्मीर की समस्या के लिए उन्हें दोषी ठहराया जाता है। पिछले एक दषक में मेरे कई मुस्लिम मित्र, जिन्हें मैं कभी उनके धर्म की दृष्टि से देखता ही नहीं था, भी यह सवाल उठाने लगे हैं कि आज भारत में मुसलमान होने का क्या अर्थ है। मुसलमानों की उदारवादी परंपरा, जिसमें खान अब्दुल गफ्फार खान से लेकर जाकिर हुसैन, उस्ताद बिस्मिल्ला खान, साहिर लुधियानवी, कैफी, आजमी और जावेद अख्तर जैसे लोग शामिल है, आज भी जिन्दा है परन्तु समस्या यह है कि उनके समुदाय में उनकी सीमित स्वीकार्यता है।

आज भी 'मुस्लिम फॉर सेक्यूलर डेमोक्रेसी' और 'माडरेट मुस्लिम' जैसे संगठन, इस्लाम के मुल्ला संस्करण के विरुद्ध आवाज उठा रहे हैं। जिस सवाल पर हमें विचार करना चाहिए वह यह है कि सज्जनता, विवेक और तर्क की इन आवाजों को मुस्लिम समुदाय में तव्वजो क्यों नहीं मिल रही है। क्या कारण है कि यह समुदाय अब भी रूढिवाद की बेड़ियों जकड़ा हुआ है। यह भी दिलचस्प है कि आज हिन्दू राष्ट्रवादी विचारधारा के प्रभाव में आकर और वर्तमान सत्ताधारियों की सोच के चलते, बहुसंख्यक समुदाय भी आस्था और सच, मिथक और यथार्थ के बीच का भेद भुलाता जा रहा है। हम केवल उम्मीद कर सकते हैं कि हामिद दलवई जैसे लोग जो सुधार के प्रति प्रतिबद्ध थे और असगर अली इंजीनियर जैसे व्यक्तित्व जो इस्लाम का मानवतावादी चेहरा लोगों के सामने ला रही थीं, की आवाज सुनी और समझी जाएगी। यह भी आवश्यक है कि हिन्दू राष्ट्रवाद के बढ़ते कदमों को रोका जाए क्योंकि वही समाज में इस समुदाय के प्रति घृणा उत्पन्न कर रहा है और इसे हाँशिए पर ढकेल रहा है।

❑ जानकारी ❑

कैसे बनवाये अपने नाम पर डाकटिकट

(पिछले दिनों बहुत हल्ला था अमुक शायर के नाम पर टाक टिकट निकला है, खोजने पर जो पता चला वो ये हैं। हमने यह जानकारी जनहित में छापी है।

पृष्ठ 2 का शेषांश

वादे हैं,.....

आकार में मनुष्य से बड़ी थी, किन्तु 2014 के बाद से देश में उसका स्थान और व्यक्तित्त्व भी आकार में लगातार बड़ा होता चला गया, करोड़ों अहिंसक लोगों ने 'गाय' माँ कहकर पुकारा और गौरक्षक दल गठित हुए जिन्होंने अपनी बेजुबान माँ के लिए संदेह के आधार पर मुसलमानों/दलितों पर हमला किया, मारा, पीटा और दादरी में अखलाक और अलवर में पहलू खान की हत्या कर दी।

अब गाय के लिए आधार कार्ड बना रही है सरकार, वैसे भी आधार ही अब इस देश में रहने के लिए मुख्य आधार है मनुष्यों के लिए भी, यूपी में गाय के लिए एम्बुलेंस सेवा शुरु हो चुकी है, डिप्टी सीएम केशव प्रसाद मौर्य ने 1 मई को पांच गौवंश चिकित्सा मोबाइल वैन को हरी झंडी दिखाकर रवाना किया। यह दीगर की बात है कि जब राजधानी लखनऊ में उप मुख्यमंत्री केशव प्रसाद मौर्य गायों के लिए एंबुलेंस सेवा की शुरुआत कर रहे थे, उसी समय वहाँ से करीब तीन सौ किलोमीटर दूर इटावा में एंबुलेंस न मिलने के कारण एक व्यक्ति अपने पंद्रह साल के बच्चे के शव को कंधे पर लादकर जा रहा था।

अब तो सरकार ने सुप्रीम कोर्ट से यह भी कह दिया कि 'नागरिक का अपनी देह पर कोई अधिकार नहीं है,' और दलील यह है कि जब शुदकशी और गर्भपात का किसी को अधिकार नहीं है तो अपने शरीर पर अधिकार की बात कहां है, हँसिएगा मत कि एक समय के आधार विरोधी आज आधार के सबसे बड़े पक्षधर बन गये हैं।

एक बात और, हर बात पर ट्वीट करने वाले डिजिटल इंडिया के प्रचारक एवं संस्थापक फकीर साहेब की छत्तीसगढ़, झारखण्ड या देश के किसी और हिस्से में आदिवासियों की मौत का अत्याचार पर आजतक कोई ट्वीट किया है क्या ? आपने पढ़ा हो तो अवगत करवाइएगा।

सर्जिकल स्ट्राइक कर सेना की खोई हुई ताकत का एहसास कराने की बात करने वाली इस सरकार से कोई पूछे कि जम्मूकाश्मीर मे जो हालात हैं वो क्यों हैं ? कैसे पाकिस्तानी भारतीय सीमा में घुसकर हमारे सैनिकों को मार जाते हैं, उनके शव क्षत-विक्षत कर जाते हैं ? क्योंकि कश्मीरी पत्थरबाजों की फडिंग का रास्ता तो बंद हो गया था नोटबंदी के बाद! है न. और वहाँ सत्ता में भी है आप।

एक खबर के अनुसार - 'भारत में धार्मिक आजादी को लेकर छिड़ी बहस के बीच युनाइटेड स्टेट कमीशन ऑन इंटरनेशनल रिलिजस फ्रीडम (यूएससीआईआरएफ) ने अपनी एक रिपोर्ट के जरिए इस बात का खुलासा किया है कि भारत के 29 में से 10 राज्यों में धार्मिक आजादी का खुलेआम उल्लंघन किया जा रहा है। यूएससी आईआरएफ ने 2017 की अपनी वार्षिक रिपोर्ट में इस बात का खुलासा करते हुए हिन्दू राष्ट्रवादी संगठनों को इसके लिए जिम्मेदार ठहराया है। रिपोर्ट में धार्मिक आजादी के मामले में भारत को अफगानिस्तान, मिश्र,तुर्की, इराक और अजाकिस्तान के साथ रखा है। इस रिपोर्ट में न सिर्फ अल्पसंख्यकों की बल्कि दलितों की हालत भी चिन्ताजनक बताई गई है, रिपोर्ट को मुताबिक राष्ट्रीय स्वयंसेवक-संघ (आरएसएस) और विश्व हिन्दू परिषद (बीएचपी) ने अल्पसंख्यकों और हिन्दू दलितों के खिलाफ घटनाओं को बढ़ावा दिया है। रिपोर्ट में वह भी बताया गया है कि गैर सरकारी संगठनों के फंड को घटाकर धर्म परिवर्तन और गौरक्षा जैसे मदों में इस्तेमाल किया जा रहा है। रिपोर्ट में जिन दस राज्यों की हालत चिंताजनक बताई गई है, उनमें यूपी, बिहार, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश, ओडिशा, कर्नाटक और राजस्थान हैं। ये संस्था दुनिया में धार्मिक आजादी का उल्लंघन करने वालों की निगरानी के लिए अंतर्राष्ट्रीय मानकों का प्रयोग करती है।

बाकी अब विपक्षी दल सोचें..... और आप सभी सोचिए ..... मैं आधार के लिए आवेदन भरकर आता हूँ।

–नित्यानंद गायेन
इस अंक के सम्पादक
–886029-7071
(दिल्ली की सेल्फी
साप्ताहिक के सम्पादक)

❑ व्यक्तित्व ❑

राजकुमारी अमृत कौर

जन्म : फरवरी 2 सन् 1889, लखनऊ
मृत्यु : 2 अक्टूबर सन् 1964

कार्यपद :-

स्वतंत्रता सेनानी, प्रथम भारतीय महिला जो केन्द्रीय मंत्री बनी थीं, अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान।

राजकुमारी अमृतकौर का जन्म 2 फरवरी 1889 में नवाबों के शहर लखनऊ में हुआ था। उनका ताल्लुक कपूरथला, पंजाब के राजघराने से था। देश के विभाजन से पूर्व अमृतकौर अंतरिम सरकार में केन्द्रीय मंत्री थीं। वे महान समाज सुधारक और गांधीवादी भी थी। देश की आजादी और विकास में उनका योगदान सराहनीय है।

जीवन :- अमृतकौर 'राजसी कपूरथला' परिवार से ताल्लुक रखती थीं परन्तु उन्होंने देश की सेवा के लिए राजसी जीवन छोड़ दिया था। उनके पिता राजा हरनाम सिंह और रानी हरनाम सिंह की आठ संतानें थीं। अमृत कौर उनकी एकलौती बेटी और सात भाईयों की एकमात्र बहन थीं। उन्होंने अपनी स्कूली शिक्षा इंग्लैण्ड के स्कूल शेरबॉन से पूरी की थी। अमृतकौर ने स्नातक की डिग्री ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी से प्राप्त किया था। वे टेनिस की बेहतरीन खिलाड़ी थीं और इस खेल के लिए उनको बहुत सारे पुरस्कार भी मिले थे। वह एक रईस घराने से ताल्लुक रखती थीं और चाहती तो शान से राजसी जीवन निर्वाह कर सकती थीं परन्तु उन्होंने सारे राजसी सुख छोड़कर देश के लिए काम करना शुरु किया। भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान उनकी भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण थी। उन्होंने एक समाज सुधारक के तौर पर भी महत्वपूर्ण कार्य किया। राजा हरनाम सिंह बहुत धार्मिक और नेक दिल इंसान थे, वे अक्सर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के महत्वपूर्ण नेताओं जैसे गोपाल कृष्ण गोखले आदि से मिलते रहते थे। शिक्षा पूरी करने के बाद अमृतकौर ने भी स्वाधीनता संग्राम के प्रति रूचि लेना शुरु किया और स्वतंत्रता सेनानियों के कार्य शैली के बारे में जानकारी हासिल की थी। वे महात्मा गांधी के विचारों से बहुत प्रभावित थीं। जलियावाला बाग कांड ने उनको बहुत आहत किया था और वहीं से उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम के लिए काम करने का निर्णय लिया था। भौतिक सुख सुविधाओं से दूर उन्होंने महात्मा गाँधी के साथ देशहित के लिए काम किया। वर्ष 1934 में अमृतकौर हमेशा के लिए महात्मा गाँधी के आश्रम में रहने चली गयीं। उन्होंने दलितों के साथ होने वाले दुर्व्यवहार के खिलाफ भी आवाज उठायी थी।

गांधीवादी के रूप में :- विदेश से पढ़ाई करके जब वह वापस भारत लौटी तब उनकी मुलाकात मुम्बई में महात्मा गांधी से हुई। वह उनके विचार से बहुत प्रभावित हुई थीं। उसी दौरान वह 'भारत छोड़ो आन्दोलन' का हिस्सा बन गई। उसके बाद गांधी द्वारा जो भी आन्दोलन किए गए, अमृतकौर उसका महत्वपूर्ण हिस्सा थीं। वे महात्मा गांधी के आदर्शों की अनुनायक थीं। नमक सत्याग्रह के दौरान डांडी मार्च में अमृतकौर गांधी जी के साथ थीं।

आजादी के बाद :- भारत की आजादी के बाद अमृतकौर जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में केन्द्र सरकार में शामिल हुई। अमृतकौर पहली महिला थीं जो केन्द्र में पद संभाल रही थीं। अमृतकौर ने 'स्वास्थ विभाग' का कार्यभार संभाला। केन्द्र सरकार में अमृत कौर एकमात्र ईसाई थीं। वर्ष 1950 में उन्होंने 'विश्व स्वास्थ्य सम्मेलन' के अध्यक्ष पद के लिए चुनाव लड़ा था। 'अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान दिवस' की स्थापना में भी उनकी प्रमुख भूमिका रही। इसके लिए उन्होंने जर्मनी और न्यूजीलैंड से आर्थिक मदद भी ली थी। उन्होंने पुनर्सुधार में भी सहयोग दिया था। अमृतकौर और उनके भाई ने संस्था के कर्मचारियों के 'हॉलिडे होम' के लिए अपनी संपत्ति दान कर दी थी। करीब 14 साल के लिए वे 'भारतीय रेडक्रास सोसाइटी' की अध्यक्ष भी रहीं। भारत के विकास में उनका योगदान सराहनीय था। वर्ष 1957 तक अमृतकौर भारत की 'स्वास्थ्य मंत्री' थीं। उसके बाद वह मंत्रीपद त्यागकर सेवानिवृत्त हो गयीं परंतु कौर जब तक जीवित रहीं वह राज्यसभा की सदस्य थीं। वह एम्स के 'क्षयरोग समिति' और 'सेन्ट जान्स अंबुलेंस कार्प' की अध्यक्ष भी थीं।

2 अक्टूबर 1954 में यह महान आत्मा परलोक सिधार गयी।

स्त्रोत :- www.tshindi.com

❑ फिल्म-समीक्षा ❑

पंचलैट : कहानी से सलीमा तक / ममता पाण्डे

लगभग 50 साल बाद हिन्दी के मशहूर कथाकार फणीश्वर नाथ रेणु की दूसरी कहानी पर फिल्म बनी है। सबसे पहला जोखिम तो साहित्यिक कृति पर फिल्म बनाने का निर्णय होता है और उससे भी बडा जोखिम यह है कि कहानी आंचलिक परिवेश पर आधारित है।

प्रेम प्रकाश मोदी ने अपने इस साहसिक सफर में सिनेमा और बाजार के बीच साम्यता बनाने के लिए कहानी को थोड़ा सहज और साधारण रखने की कोशिश की। इससे तो असहमत नहीं हुआ जा सकता है सिनेमा बाजार की चीज है। बाजार लोकप्रियकरण के सिद्धान्त पर विश्वास करता है। जाहिर है कि पंचलैट बनाते समय निर्माता-निर्देशक ने कथा की साहित्यिक अस्मिता बचाने के साथ-साथ बाजार की जिजीविषा को भी ध्यान में रखा होगा। यह और बात है कि बेस्टलेटर की होड़ में अब साहित्य भी बाजारोन्मुख है। अब यह कितना गलत है और कितना सही-विवेचना का अलग विषय है।

कथा का परिवेश आजादी के बाद की देहाती पृष्ठभूमि पर आधारित है। तमाम तरह की कुरीतियों से जकड़ा गाँव-वर्तमान समय में अपनी आस्था से कूच कर गया है और देहाती आस्था का भोलापन अब खत्म हो चुका है। पंचलैट आज भी यहाँ टोले में कुछेक घरों में ही मिलेगा। निर्देशक का विज़ुअलाईजेशन कहानीकार के विज़न से अलग होता है। कहानी में सिर्फ रचनाकार का वर्तमान और भोगा हुआ यथार्थ होता है, फिल्मकार के लिए रचनाकार का यथार्थ के साथ उसका अपना अनुभव और वर्तमान परिवेश भी उससे शामिल रहता है। इसलिए भी कहा जाता है कि किसी भी साहित्यिक कृति पर फिल्म बनाना समानान्तर रचना करना है। प्रेम मोदी ने कहानी के देहाती स्वरूप को थोड़ा ज्यादा रंगीन और संश्लिष्ट कर दिया है और यही बात शुद्धतावादियों के गले की हड्डी बन गई। जिस देश में कथाहीन फिल्में भी सुपरहिट हो जाती है, गीत-नृत्य प्रधान या मसाला फिल्मे पैसा कमा लेती है, वहाँ इस ओल्ड फैशन्ड कहानी पर बनी फिल्में कौन देखेगा? प्रेम मोदी ने इन तमाम साहित्यिक और लोकप्रिय शैलियों के बीच से रास्ता निकालते हुए कुछ 'मॉर्डन नुआनसेंस' के साथ फिल्म के परिवेश को चित्रित किया। स्वप्न और यथार्थ के बीच पटकथा हिचकोले खाते हुए दर्शकों तक पहुँचती है।

फणीश्वर नाथ रेणु की कहानी फिल्म में 'जीव' की तरह है। मनुष्य के शरीर में सभी अंग हों और जीव न हो तो उसके अंगों के होने न होने से कोई मतलब नहीं होता। सिनेमा और साहित्य की कथा संरचना अलग अलग है, थोड़े से विशद रूप में कहे तो कथा संरचना साहित्यिक फार्म ही है। हो सकता है एक ही चीज के दो इंटरप्रिटेशन आपको देखने को मिल जाएं। प्रेमचन्द की कहानी सद्गति और सत्यजीत रॉय की फिल्म में एक ही घटना को दो अलग-अलग तरह से सांकेतिक रूप से दिखाया गया है। कहानी में 'कुल्हाड़ी के छूट कर गिरने' और सत्यजित राय के फिल्म में कुल्हाड़ी के धंसे रहने में अलग-अलग अर्थ व्यंजित हो रहे हैं। एक तरफ सनातनी ब्राह्मणवादी उत्पीड़न और अत्याचार के खिलाफ पराजित हो जाना है, तो दूसरी तरफ उस व्यवस्था के खिलाफ भारी प्रहार के धंसे रहने का प्रतीकात्मक अर्थ। यह अर्थ विस्तार है। पंचलैट फिल्म के अन्त में पेट्रोमैक्स जलाने के लिए गोधन मुनरी से सुगंधित तेल लाने के लिए कहता है, जबकि कहानी में नारियल तेल से ही काम चल जाता है। यहाँ एक 'पैरॉडॉक्स' है। यह पैरॉडॉक्स या विषमता वर्तमान स्थिति को भी जाहिर करता है। आज भी कोसी या उस क्षेत्र में बिजली, यातायात आदि उन संसाधनों की कमी है। लेकिन बाजार वहाँ तक खूशबू वाले तेल और शैम्पू पाउच के साथ प्रवेश कर चुका है। करोड़ों रूपए की लागत के पुल निर्माण और सड़कों के विकास की योजना के बावजूद इस क्षेत्र का विकास नहीं हो पा रहा है। ये तमाम टूल्स बाजार के विकास के लिए है। आज भी यहाँ के सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों में शादी, ब्याह और श्राद्ध जैसे मौकों पर पंचलैट (कुछ हिस्सों में जेनरेटर) जलाया जाता है।

एक जमाने में एनएफडीसी की सहायता से कई साहित्यिक फिल्मों का निर्माण हुआ था। मणि कौल की अधिकतर फिल्में साहित्यिक कृतियों पर आधारित हैं। ऐसी फिल्मों को कितने लोगों ने देखा है, हर बात पर साहित्य का रट्टा मारने वाले संरक्षकों को भी खंगाल कर देखिए। वे फिल्में अपने क्राप्ट के हिसाब से अद्भुत है। लेकिन अपने ही लोगों के लिए एलियन साबित हुई। 'उसकी रोटी' मोहन राकेश की कहानी पर आधारित फिल्म थी। फिल्म में 'रितादान्दो म्युजिकल क्राप्ट' की तरह दृश्य धीरे-धीरे ठहर जाता है, एक दृश्य के घटित होने के बीच में ठहराव और ठहराव के साथ अन्य दृश्यों का गुजर जाना। ऐसा ठेम्पो सिर्फ निर्मल वर्मा की कहानियों में मिलता है। गौरतलब है कि इस फिल्म को साहित्यिक मर्मज्ञों ने इसी ठहराव और स्लो टेम्पो के लिए खारिज कर दिया। फिल्म 'पंचलैट' में मूल घटना से इतर कई परिघटनाएँ घटती है, और ये घटनाएँ सामान्य फिल्मी फार्मूला के आधार पर ही घटित होती है। यहाँ दृश्य डायनेमिक होते साहित्य के अपने तत्व होते हैं, उन तत्वों को जब सिनेमा के अनुसार ढाला जाता है तो आरम्भ, विकास, चरम सीमा और अन्त को चुना जाता है। सिनेमा को फार्म को ध्यान में रखकर इन्हीं तत्वों के आधार पर दृश्य की संरचना की जाती है। ओरखीय कथा संरचना इस फिल्म का सबसे मजबूत पक्ष रहा है और इसके बिना इस कहानी पर मेनस्ट्रीम सिनेमा बनाना असंभव ही होता। पटकथा में फ्लैशबैक, अखंडित और खंडित-जुड़ी सभी तत्वों को क्रम में लेकर काल्पनिक दृश्य भी शामिल होते हैं जिसे फिल्म की मुख्य घटना साथ संबद्ध किया जाता है। निर्देशक मोदी ने रासलीला के दृश्य के साथ फिल्म को जोड़ा है, इस दृश्य को जोड़ने के पीछे समकालीन कहानियों का आधार जरूर रहा होगा। आप महतो जाति की सामाजिक संरचना का अवलोकन करेंगे तो पाएंगे, यह 'अन्य पिछड़ा वर्ग' में सबसे संपन्न जाति है। प्रेमचन्द की कहानियों में भी इसका प्रसंग मिलता हैं। भागवत, यज्ञ और रासलीला को लेकर ये काफी आसक्त जाति है, 'सवा सेर गेहूँ' तथा अन्य कहानियों में इस तरह की प्रवृत्ति के बारे में लिखा गया है। फिल्म में रासलीला का दृश्य कथा का ही विस्तार है, अतिरेक नहीं।

'पंचलैट' बहुत बड़ी क्लासिक फिल्म नहीं है, इसे सामान्य फिल्मी फार्मूले के आधार पर बनाया गया है। सबसे बड़ी बात है है आम दर्शकों के लिए बनाया गया है। 'पंचलैट' सलीखा देखने के बजाय अगर आप स्क्रीन पर कहानी पढ़ने जा रहे हैं तो आपका निराश होना तय है। प्रेमचन्द का सिनेमा से मोहभंग होने के बावजूद वे इसे साहित्य का कार्यक्षेत्र मानते हैं। सही अर्थों में कोई उपन्यास या कहानी जब सेल्युलाइड पर उतारी जाती है तो वह कथा का फिल्मांकन होते हुए भी स्वायत्त और स्वतंत्र होती है। बिल्कुल सामान्तर रचना जिसका हर दृश्य कहानी या उपन्यास का पुनर्पाठ होता है।

ISSN : 2454-2121
R.N. No. WBHIN/2000/1974
Central Govt. Postal Regd. No. TECH/WB/RNP/SP-003/2014-16

1 से 30 अप्रैल
कुल पेज : 28

मूल्य : 5.00
सदीनामा
E-mail : jjitanshu@yahoo.com

हमारी बेबसाइट :
www.sadinama.in
इस अंक को इंटरनेट पर पढ़ें

मार्च - 2018 के अन्त पर प्रतिक्रियाएँ

कई प्राप्त पत्रों में से एक पत्र

संपादक जी, नमस्कार,

सदीनामा मार्च '18 अंक में श्रीनिवास जी का साक्षात्कार एवं कहानी पप्पू पास हो गया मन को छू देने वाले हैं। संपादकीय का तो क्या कहना.....

धन्यवाद, अमृता चतुर्वेदी, amrita.chaturvedi98@mail.com

Whatsup Messages

Messages-1

लेखक / सम्पादक महाशय,

इसमें एक कविता है 'मुसलमान'।

मेरे कट्टर हिन्दू मित्र मुझे बहुत ही सॉफ्ट मानते हैं, लेकिन मेरे जैसे व्यक्ति को भी इस कविता को पचा पाना और इसका औचित्य, इसकी झूठी, तथ्यहीन, विचार शून्य बातों को पचा पाना सम्भव नहीं हुआ।

Messages-2

ऐसी कविता दो ही प्रकार के लोग लिख सकते हैं

एक, जिसने अपने लिंग का सुन्नत किया हो। या फिर दूसरा, जिसने अपनी बुद्धि और विचारों का सुन्नत किया हो।

Messages-3

आप वस्तुतः हरामपंथी होते जा रहे हैं, जितांशु जी। इसी पत्रिका ने एक बार यह सिद्ध करने का असफल प्रयास किया था कि आर्य गाय खाते थे।

Messages-4

अगर इसकी प्रिंट आई होती तो अपने कुत्ते की गंदगी साफ करने में तो काम आती।

Messages-5

Unwanted softcopy से तो आप जैसे लोग वैचारिक प्रदूषण ही बढ़ाते हैं।

ऐसे unwanted softcopy किसी ऐसे नाजायज बच्चे की तरह होते हैं जिसे एक आदमी और एक औरत अपनी हवश में पैदा कर देते हैं। और फिर समझ में नहीं आता है कि इस बच्चे का क्या किया जाए, तो चलो इसे सड़क पर छोड़ दो।

Messages-6

यही सोच कर आप भी इसे फारवर्ड कर रहे हैं क्या???

मुद्रक, प्रकाशक एवं स्वत्वाधिकारी सोनिया शर्मा द्वारा डायमंड आर्ट प्रेस, 37ए, बैटिक स्ट्रीट, कोलकाता-69 से मुद्रित तथा
H-5, Govt. Qtrs. Budge Budge (बजबज), Kolkata-700137, 24Pgs(S). W.B. India प्रकाशित।
संपादक : जितेन्द्र जितांशु, 9231845289, E-mail : jjitanshu@yahoo.com R.N.1 No. WBHIN/2000/1974